भावों के विशुद्ध क्षण

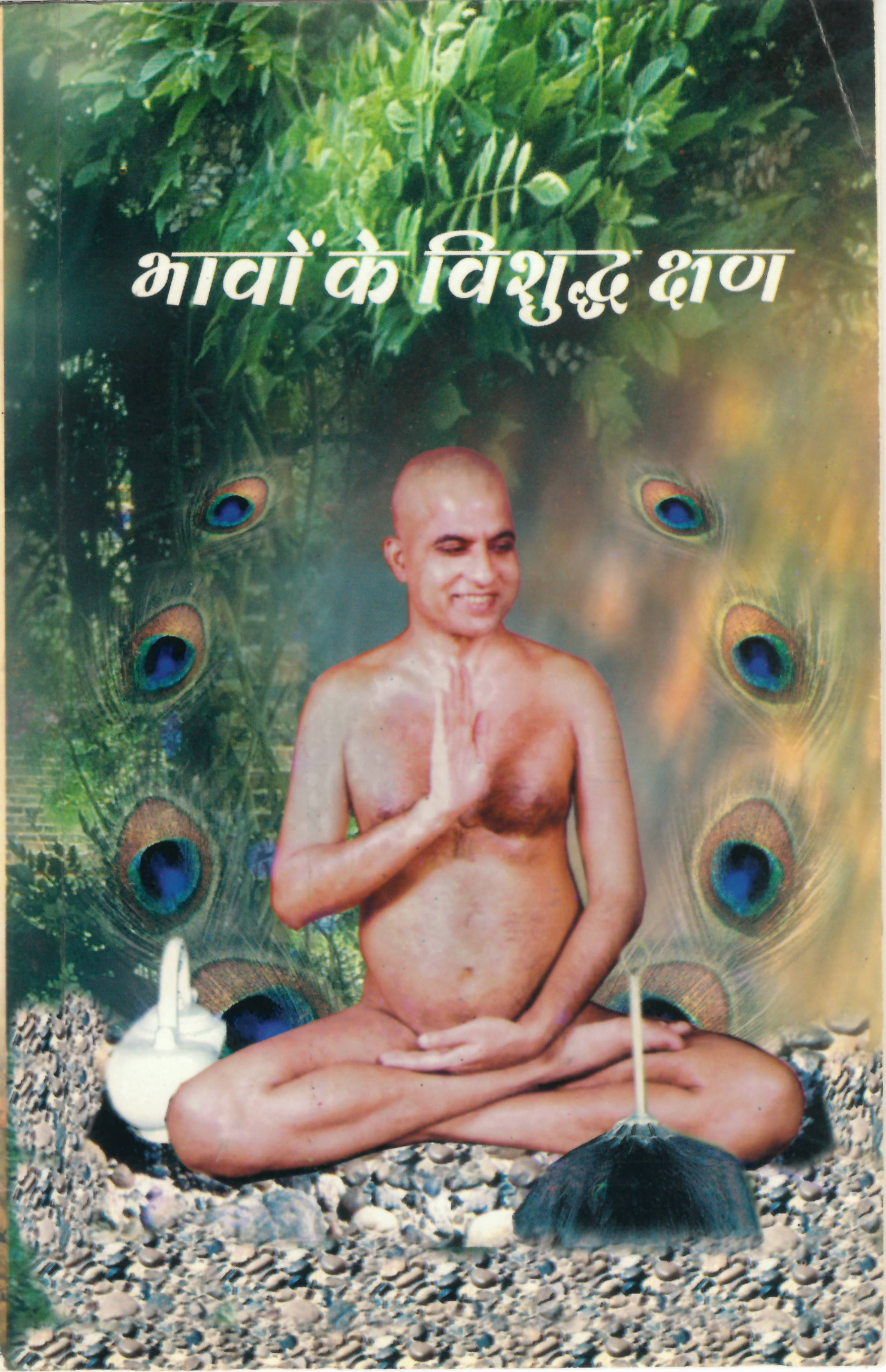

भावों के विशुद्ध क्षण

* रचयिता *

आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज

* प्रकाशक *

अशोक गोइल

❖

कृति

भावों के विशुध्द क्षण

❖

रचीयता:

आचार्य श्री विरागसागरजी महाराज

❖

तृतीय संस्करण:

२००० प्रतियां

❖

पुनः प्रकाशन हेतु मुल्य :

२० रु.(अगले संस्करण के लिए सुरक्षित)

❖

प्रकाशक :

अशोक गोइल,छाया गोइल,

रिसाली,मिलाई एवं गोइल परिवार

❖

प्राप्ति स्थान :

श्री विराग विद्यापीठ, श्री दि.जैन चैत्यालय मंदिर,बताशा बाजार

भिण्ड (म.प्र.)

❖

मुद्रक :

पराग कुमार जैन, (०७२५६) ऑ.२२२९४५, नि.२२३४१५

(पराग कम्प्यूटर), कारंजा (लाड), जि.वाशिम, (महाराष्ट्र)

मुखपृष्ठ :

श्रीयुत राजा गोरे, (०७२५६) २२४०८०.

❖

परम पूज्य सन्मार्ग दिवाकर

आचार्य श्री १०८ विमलसागर जी महाराज

आर्शीवचन

॥ श्री वीतरागाय नमः ॥

॥ श्री महावीर कीर्ति गुरुभ्यो नमः ॥

मन वन्दर है, उसे कोई न कोई कार्य चाहिये, यदि उसे सत् चिंतन में नहीं लगाया जायेगा तो वह अपनी चंचल वृत्ती से गुण रूपी बाग को अस्त-व्यस्त कर देगा। हमारे मुनि श्री विरागसागर जी ने उसे सत् चिंतन में लगाते हुये जो भावों के विशुद्ध क्षण नामक काव्य पुस्तक लिखी है वह वहुत श्रेष्ठ है, अतः उन्हें मेरा आर्शीवाद है कि वे इसी तरह सत् साहित्य की सेवा करते हुये अपने ज्ञान को निर्मल बनाते हुये जैन शासन की प्रभावना करें ।

आचार्य श्री विमलसागर

१६-११-१९८७

खानिया, जयपुर (राज.)

अपनी बात ....

इस भौतिक युग में लोग भौतिकता की चाकाचोंध में उलझे हुये है। और धर्म को भूलते जा रहे है। पर हमारे दिगम्बर आचार्य जीसतत् प्रयास से सामाजिक चेतना को जाग्रत करने में लगे हुये है।

उपसर्ग विजेता सुनना और बोलना अच्छा लगता है पर राह उपसर्ग जिस दिन हुआ भिलाई वासियो के दु:ख का कोई पार नही था । १००८ पारसनाथ भगवान जी का उपसर्ग तो हम लोग सुनते थे। आचार्य भगवान पर जो उपसर्ग हुआ वह हमारी आंखो के समाने ३७ घंटे लगातार एक ही आसन में बैठे रहे और उन्होंने अपनी सरलता सहजता और समता का परिचय दिया।

त्रिलोकी नाथ जीसे यही प्रार्थना करते है कि उन्हें तीर्थंकर प्रकृतिका बंध हो।

आचार्य गुरुवर विरागसागरजी की लिखित पुस्तिका विशुद्ध भावों के क्षण का प्रचार करने का सौभाग्य हमारे परिवार को मिला साथ ही कारंजा समाज का हम आभार व्यक्त करते है जिन्होने प्रसार करवाने में हमारे परिवार को सहयोग प्रदान किया।

त्रिवार नमोस्तु के साथ
अशोक, छाया, नीरज गोइल,
गोइल परिवार.

विषयानुक्रमणिका

क्र. एवं पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१	आचार्य श्री परिचय	१
२	प्रभु की खोज	२
३	जागो अति शीघ्र जागो	३
४	गुरु दर्शन	४
५	वीर का संदेश	५
६	तीर्थ धाम	६
७	स्वरुपानन्द	७
८	सत्-विचार	८
९	बिगाड़ से सुधार.....	९
१०	संयोग	१०
११	सोना बना देता सोना	११
१२	मन/बन्दर	१२
१३	रचो - पचो	१३
१४	परम भावना	१४
१५	जीवन की सार्थकता	१५
१६	अपूर्व- स्थान	१६
१७	ज्ञान	१७
१८	खोना पड़ेगा	१८
१९	भेद विज्ञान/आत्म कल्याण	१९
२०	जरा भी परवाह नहीं.......	२०
२१	स्व का ध्यान कराते जाओ	२१
२२	समता	२२
२३	प्रत्यक्षता	२३
२४	नश्वरता की विनाशता	२४
२५	निर्वाणोत्सव	२५

क्र. एवं पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
२६	शान्ति धारा	२६
२७	हो धिक्कार	२७
२८	ये है त्रिशूल	२८
२९	भक्ष्याभक्ष्य	२९
३०	विषयानुराग	३०
३१	प्रत्याशा	३१
३२	अपनों में एक	३२
३३	अपने को देख	३३
३४	एक रात	३४
३५	मार्ग गामी	३५
३६	नहाऊँगा	३६
३७	प्रभु है ज्ञान दर्शन	३७
३८	विनश्वर -जीवन	३८
३९	व्यामोह	३९
४०	ये नृत्यकार	४०
४१	मोह	४१
४२	प्रतिक्रमण	४२
४३	स्वाध्याय	४३
४४	कायोत्सर्ग	४४
४५	सत् ध्यान	४५
४६	ईर्या समिति	४६
४७	भाषा समिति	४७
४८	एषणा समिति	४८
४९	आदान-निक्षेपण समिति	४९
५०	सारों का सार	५०
५१	उत्सर्ग समिति	५१
५२	दर्शन	५२
५३	नया वर्ष	५३
५४	एक ही राग	५४

क्र. एवं पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
५५	ये -रोग	५५
५६	ये कोप बना देता है विद्रूप	५६
५७	अभिमान	५७
५८	मायाचारी	५८
५९	लोभ मचाता है क्षोभ	५९
६०	दु:ख है	६०
६१	दया	६१
६२	वीत राग प्रभु दर्शन	६२
६३	जिनेन्द्र मुद्रा	६३
६४	विषय विकास	६४
६५	मेरे ये कदम	६५
६६	विराधना/ साधना	६६
६७	अकेला	६७
६८	कोरा जीवन	६८
६९	परम धर्म सच्चा	६९
७०	भवभ्रमण	७०
७१	चर्या	७१
७२	साधना	७२
७३	सुख ही सुख	७३
७४	साधना कब तक	७४
७५	मलीनता का मूल	७५
७६	विरागी सन्त	७६
७७	गुरु सेवा	७७
७८	जीवन महान	७८
७९	भक्त भावना	७९
८०	गुरु शरण	८०
८१	स्वपर प्रकाशक/तारक	८१
८२	संत प्रभावना	८२
८३	बुरी आदतों से सुधार	८३

क्र. एवं पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
८४	संताप	८४
८५	संसर्ग	८५
८६	वैय्यावृत्ति	८६
८७	जीवन सफल	८७
८८	उसका दर्द	८८
८९	असत्य से सत्य	८९
९०	कर देगा बदनाम	९०
९१	जीवन की कामना, लक्ष्मी को मानना नहीं	९१
९२	असाधारण/साधन	९२
९३	कर्म से अधिक धर्म	९३
९४	कला पूर्ण रुचि	९४
९५	परम धाम	९५
९६	प्यास की सास-आश	९६
९७	मेरा साम्राज्य न	९७
९८	मोक्ष मार्ग	९८
९९	प्रगति नहीं अवनति	९९
१००	वास्तविक प्रक्रिया	१००
१०१	चरित्र रथ	१०१
१०२	उन्मार्ग/मार्ग	१०२
१०३	आचार्य लिखित साहित्य	१०३
	आचार्य लिखित साहित्य	१०४

१०८आचार्य श्री विरागसागरजी महाराज

✻ संक्षिप्त परिचय ✻

जन्म	-:	२ मे १९६३, पथरिया, दमोह (म.प्र.)
पूर्व नाम	-:	अरविन्द कुमार जैन
पिता का नाम	-:	श्री कपूरचंद जी जैन
माता का नाम	-:	श्रीमती श्यामा देवी
लौकिक शिक्षा	-:	इन्टर
क्षुल्लक दीक्षा	-:	२ फरवरी १९८०, बुढ़ार
क्षुल्लक नाम	-:	१०५ श्री पूर्णसागर जी महाराज
मुनि दिक्षा	-:	९ दिसम्बर १९८३, औरंगाबाद
गुरु	-:	प.पू.आ.श्री.१०८ विमलसागरजी महाराज
आचार्य पद	-:	८ नवम्बर १९९२, सिध्दक्षेत्र -छतरपुर
रुचि	-:	लेखन, काव्य रचना, चिंतन, खोज
बहुचर्चित	-:	शुद्धोपयोग, आगम चक्खू, साहू जिनेन्द्र, दर्शन -पूजन
वर्षाकाल	-:	१९८० से २००४ क्रमश: दुर्ग, नागपुर, कारंजा, कारंजा, भावनगर, पांचवों , निमाज, जयपुर, भिण्ड, भिण्ड, टीकमगढ़, श्रेयांसगिरी, द्रोणगिरी, बीना, श्रेयांसगिरी, ललितपुर, भिण्ड, कारंजा।

प्रभु की खोज

हे स्वयंभू
विभू। प्रभु
कहाँ हो ?
किधर हो ?
मैं खोजता हूँ तुझे
सदा सत् साधना से
संयम की आराधना से
विभावों की विराधना से
स्वामी,
इच्छा नहीं कुछ एहिक की,
न कांक्षा किञ्चत पारलौकिक की,
बस रंगू/विरागता में सनूं/बस एकमात्र
वीतराग के योग में
है भावना बस यही
अधम के इस सुमन में
चरण में
प्रभु की शरण में।

❖

जागो अति शीघ्र जागो

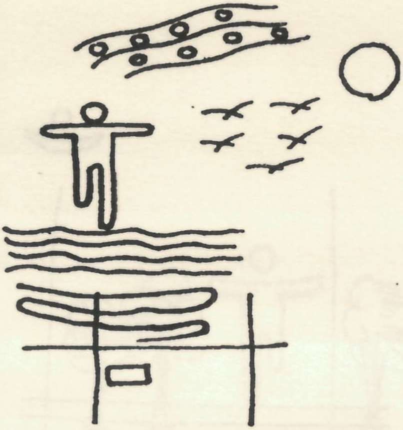

हे प्रभो
वीतराग प्रभो
भक्ति से ओतप्रोत
भक्तों की पुकार
बताने के लिए,
जगाने के लिए
किसे! आपको? नहीं
आपको नहीं
जो मोह की गाढ़ निद्रा में
अभी भी सो रहा है
खो रहा है अपने आपको
भवार्णव/ डुबो रहा है स्वंय को
अहो चेतन
तुम जागो ! शीघ्र जागो
भगवद् भक्ति तुझे जगा रही
बार-बार जगा रही है
जागो/जागो/अति शीघ्र जागो

गुरु दर्शन

अहो!
उदय, महाभाग्योदय
प्रसन्न हुआ हृदय
अहा कैसा शुभवार,
तिथि घड़ी
समय की खिलवाड़
हुए हैं गुरुदर्शन,
विमल दर्शन,
करूँ अर्चन
तन से मन से
वचन के भजन से
गुरु आप-उपकारी
परमोपकारी
स्वपरोपकारी
धर्म वात्सल्य करुणा धारी
अहिंसा के पुजारी
आ जाओ मेरे मन में
समाजाओ हृदय कमल में
खो जाऊँ पावन, जीवन में।

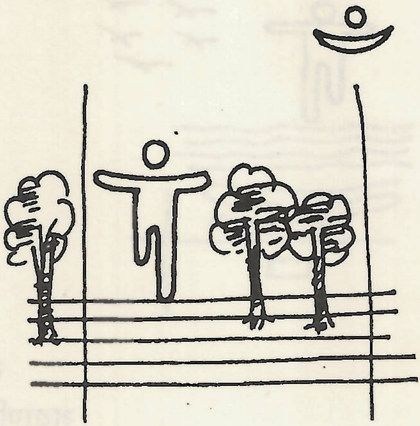

❖

वीर का संदेश

भो चित् विलासी!
चैतन्य बिन्दु आत्म्न चित।
अहो! देखो!
संसार -असार
न सार इसमें
देखा है-चारों ओर देखा
फिर भी नहीं मालूम
प्राणी क्यों हैं इसमें लीन
विवेक से विलीन
लीन विलीन
एहिक में ही तल्लीन
आत्म्न! ध्यान रखो
वीर का सन्देश
हमारा उद्देश्य
सदुपदेश को जीवन में उतारो
मत करो देर का काम
हो जाए आत्मोत्थान।

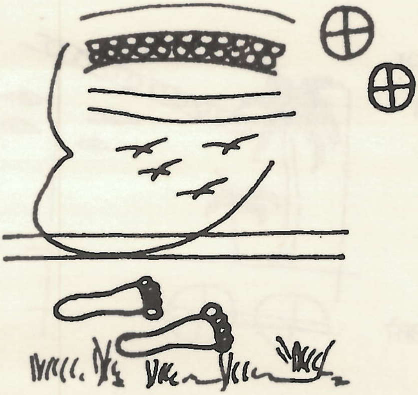

तीर्थ धाम

अहा! कितने मनोहर
सुन्दर-सुन्दर स्थान है
प्रकृति की कला
अनोखी चट्टानों का धाम
निराले ही काम
ज्ञान ध्यानज्ञों का निवास
मिला गुफाओं में प्रकाश
आत्मन् धन्य है वे
परम परमात्मन्
जिन्होंने अपने
जीवन मरण को
भव भ्रमण की, थकान को
दूर कर दिया सदा को
अहो चेतन ध्यान रखो
अगर मिटाना है भवभ्रमण की थकान
अनादि से जिससे परेशान
तो ये हैं शिवसाधनोत्तीर्ण स्थान
परम पुनीत तीर्थ धाम
लगाले यहाँ तू ध्यान
हो जाए आत्मोत्थान।

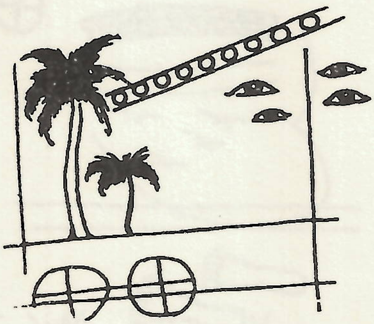

स्वरूपानन्द

अहो आनन्द
परमानन्द / ज्ञानानन्द
कहाँ ? शास्त्र में!
विद्या पाठक में ! य-
विद्यार्थी में।
ना! ना ना ना ना
वहाँ नहीं, उनसे नहीं, पर से नहीं
अपितु
स्वरुपानंद
होता है आत्मन्
स्वयं के स्वरुप में
बस लीन हो, उस रुप में
विलीन हो जा
स्वरुप में
सदा सदा के लिये ।

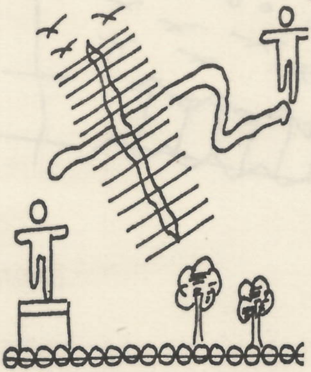

सत् – विचार

ओ !
ओ विराग !!
धन्य है उसका जीवन
अहा धन्य है उसका वतन
सफल है पाना उसका स्वतन
जिसने कर दिया है गमन
शिव महल की ओर गमन
न है अब उसका पतन
अहो !
अब तुम क्या कर रहे हो चेतन
सोचो – सोचो
सोचते ही मत रहो
उतारो उसे शीघ्र
हिय उतारो
वही विचार सत होता है
जो हृदयस्थ तम खोता है
पवित्रता से, प्रसन्नता से संजोता है।

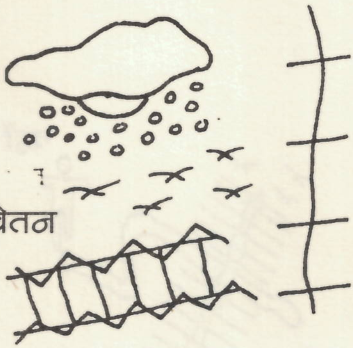

बिगाड़ से सुधार .....

ओ चेतन !
तुम क्या हो तो चेतो
अहा!
यह प्राणी
क्या से क्या नहीं कर सकता है
अपने जीवन में
तन में, मन में, वचन में
बिगाड से सुधार
सुधार से बिगाड
आड में परिजन की
जन-- जन की
स्वजन की
अहो आत्मन् !
सुन्दर है, श्रेष्ठ है
बिगाड से सुधार
न कि सुधार से बिगाड ।

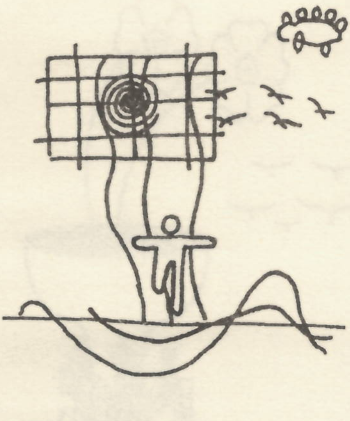

❖

संयोग

अहो !
कैसा है
संसार का योग/ संयोग
वियोग से संयोग
संयोग से वियोग
अनादि से चलता आया है
चल रहा है चलता आया है
चल रहा है चलता भी रहेगा
यही स्वभाव ही
संसार की निशानी है
पहिचाना है मैंने
आत्मन् ध्यान रखो
ये चार दिन का योग
लायेगा वियोग
जो होता है इसमें एक
खो देता है वो विवेक
कुछ क्षण का सुख
देता है दु:ख
हो जा सचेत
न हो इसमें एक

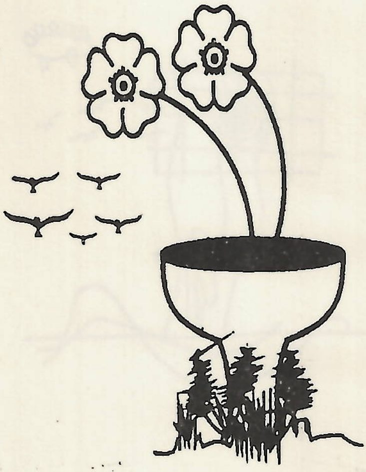

सोना बना देती है साधना

जो
सोता है
खो देता है वह
अपनी साधना को
भूल जाता है सब
परमाराधनाओं को
बस ! एक मात्र
विराधना की ओट में
वै-मनस्क साधना
साधना नहीं, अपितु
सर्वोत्कृष्ट विराधना है
जहां विराधना है
वहां साध्य की सिद्धी कहां
साध्य की पहिचान कहाँ
सिद्धी का फल कहाँ
विराधना कि विराधना से ही
खिलता है सुमन
मिलता है चमन
सोने से बचाकर
बना देती है सोना
यह साधना ।

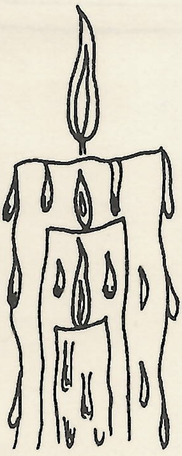

मन/बन्दर

मन !
कैसा बन्दर है
जो अन्दर भी
मचा देता है खलबली
नचा देता है प्राणी को
उस समय फिर, हो जाता है
ज्ञान भी विस्मृत
ध्यान भी विस्मृत
सुन्दर विचार भी विस्मृत
विचार के तार (साध्य) भी विस्मृत
और ! उस समय के
हर कार्य भी
हो जाते हैं विस्मय युत
जिन्दगी की साधना
क्षण भर की विराधना से भी
कहीं हीन भासनें लगती हैं
वास्तव में/ धन्य है उनको
जिन्होंने जीत लिया है मन को ।

रचो पचो

अहो !
हे प्रभो !
ज्ञान विभो !
चेतन राम !
कहाँ जा रहे हो?
क्यों जा रहे हो?
आखिर !
क्या होगा इसका फल?
करो,
तुम नित प्रति समय
विचार करो,
तदानुसार
हित-अहित की पहचान करो
फिर सावधानी से
अहित का परिहार करो
हित मार्ग में विहार करो
बस! इन्हीं बातों को
तुम सदा
हृदय में रखो ।
रचो, पचो, हर समय
तदानुसार कार्य में।

परम भावना

अहो,
हे चिन्दानन्द,
चैतन्य - आत्मन् !
ध्यान रखो सदा
जीवन को हर पल क्षण में
न हों भक्ति विहीन
हृदय, जीवन में
नित रहे मात्र
पंच गुरु मेरे पवित्र मन में
रोष का न हो काम
किसी भी क्षण में
बस! रहे प्रसन्न मन
प्रभु के भजन में
चरण के अर्चन में
पावन गुणों के ग्रहण में
स्वस्वरुप के चिन्तन में
सत् तत्त्वों के मनन में
है यही परम भावना
मेरे विशुद्ध मन में ।

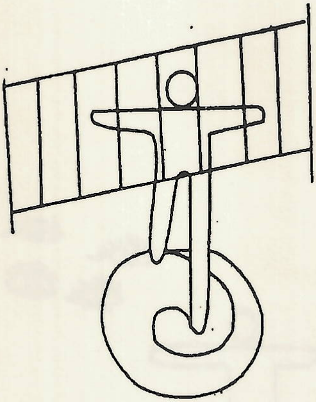

❖

जीवन की सार्थकता

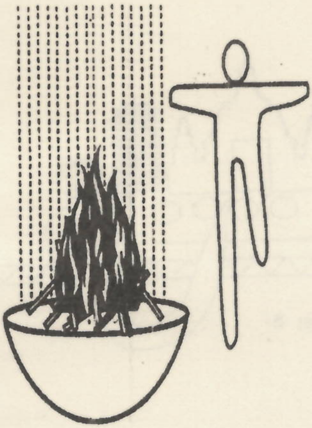

हे ईश के साधक मनीष
विचार कर!
जिस समय कषाय मल हटता है
उस समय कल्याण कारक-
विशुद्ध परिणामों का
विकास होता है
जिससे अनन्त सुख का
प्रकाश होता है
हृदय विशुद्धि से
वचन बड़े सुन्दर - सुन्दर
और अति निर्मल निकलते हैं
काय भी कर्तव्य पथ पर
आरुढ़ हो जाती है
इन योग जय की कुशलता से
बाह्य वातावरण भी बदल जाता है
सत्य साधना में
परिवर्तित हो जाता है
कहीं वैराग्य बढ़ता है तो
कहीं मित्रता फैलती है
कहीं भक्ति बढ़ती है तो
कहीं साधन होती है
चारों ओर सुख साम्राज्य फैलता है
तभी जीवन की सार्थकता होती है।

अपूर्व – स्थान

मैं
जा रहा हूँ
शीघ्र/ अतिशीघ्र
बढ़ता जा रहा हूँ
रोक का काम नहीं
टोक का निशान नहीं
बस,
एक ही धुन में
बढ़ता जा रहा हूँ
अहो कैसा अपूर्व स्थान
ध्यान ही ध्यान
नजर आ रहा हैं
नेत्रों से नहीं
अपितु अनुभव से
शान्ति रस का स्वाद आ रहा है
सुख का वेदन
वृद्धिंगत हो रहा है, होता जा रहा है
भक्ति से
प्रभु वीतराग की शक्ति से ।

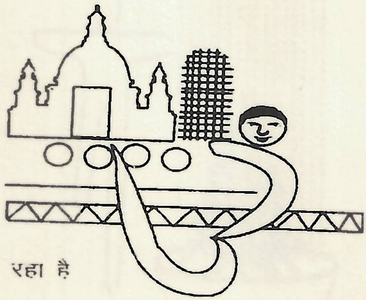

❖

ज्ञान

हे ज्ञान पिपासु !
क्या प्यास सता रही
कुछ बात बता रही
बताओ?
शीघ्र बताओ
क्या-क्या बता रही हैं
जहाँ पानी का काम नहीं
शीत वा धाम नहीं
एकमात्र,
ध्यान का है काम सही
सुसम्यक ज्योति जगी
जो होती ज्ञान मयी
मिटाता प्यास सही
जो पीते धर्म मयी
वो पाते मोक्ष मही।

❖

खोना

हे प्राणी !
अनादि काल से
सोता रहा ।
किन्तु ।
फिर भी सो रहा है?
खो रहा हैं अपने आप को
बड़ा रहा है भव ताप को
ये संसार सागर
कर देगा उजागर
फिर भी नहीं मालूम
क्यों नहीं होता सचेत
अहो धिक्कार है ऐसी बुद्धि को
जो पुनः तैयार है सोने को
ध्यान रखो/सोते रहने से
सोना नहीं बन सकते
सोना बनने के लिए
खोना पड़ेगा/मोह नींद को
कोना भी पकडना पडेगा
शिव मार्ग/मोक्ष मार्ग का
अतः देर मत करो
पकड़ो पकड़ो/शीघ्र पकड़लो
जकड लो निज बल से
कहीं छूट न जाए हृदय से ।

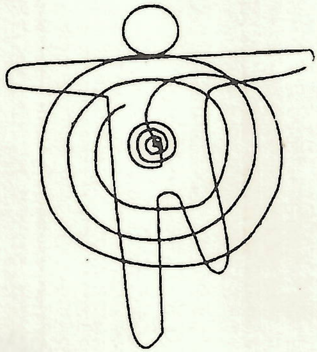

भेद विज्ञान / आत्म कल्याण

ओ ज्ञानी !
कैसा है तू ध्यानी
सुन ले जरा तू
हृदय की खुश-खबरी
पावनता की पहिचान
गुणों की खान
धर्म की शान
पवित्रता का निशान
कर्तव्य स्वयं का जान
उसे, ही पहिचान
आन! आन! आन
गुणों की आन
निज हृदय में तान
करले स्वपर भेद विज्ञान
यही ध्यान का काम
लगाले मन पर लगाम
सुनले देकर कान
यही वीर की बान
बढ़ने से होंगे महान
होगा आत्म कल्याण
जान/ जान/जान
इसे ही शीघ्र ही जान।

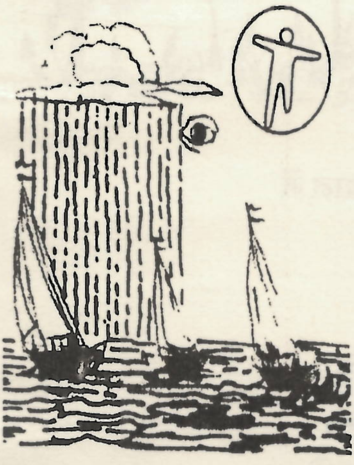

जरा भी परवाह नहीं ....

समय जा रहा है
निकलता ही जा रहा है
अपनी अनोखी चाल से
किन्तु ये प्राणी
सो रहा है।
खो रहा है अपने आपको
जरा भी परवाह नहीं
क्या करना है हमको
क्या बनना स्वयं को
इसका भी ध्यान नहीं
ज्ञान का भी काम नहीं
भव भय का भी नाम नहीं
लगा है दिन रात/ अपने बखान में
अरे ए शेतान ! मत बन हैवान
शैतानियत की भी
कोई सीमा होती है
ध्यान की भी एक लीला होती है।
कस उसमें ही/ नित प्रति समय
रमते रहो ! रमते रहो !! रमते रहो !!!

❖

स्व का ध्यान कराते जाओ.......

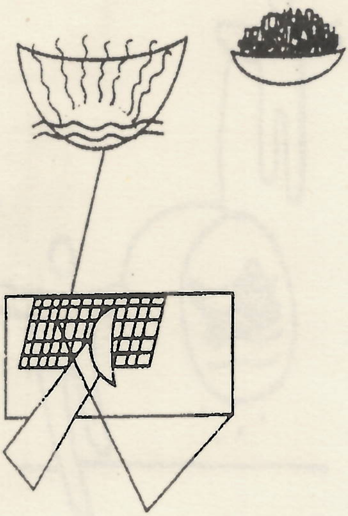

ओ विराग !
आओ आओ!
अति शीघ्र आओ
तुम अपनी गाथा सुनाओ
गाओ उसे ही गाओ
मुक्ति का मार्ग दिखाओ
दु:ख सागर से छुड़ाओ
भव सिन्धु से बचाओ
आओ आओ
मेरे हृदय में समाजाओ!
वीतराग के पुजारी को
अपना नाम बताते जाओ
बस! कहना है मात्र इतना
कि... तुम
स्व का ध्यान कराते जाओ।

समता

ये मोह ममता
खोती है समता
लाती है विषमता
ममता विषमता को
खोती है समता
अहा!
समता ! समता!!
इच्छुक है जनता
पाने को !
स्वगीत गाने को
ज्ञान की तान बजाने क
सत् साधना से
स्व स्थान पाने को
जग में न भरमाने को
आनंद का धाम बताने को
मार्ग है मात्र "समता"
न होवे ममता
तोडती है विषमता
समता ! समता !! समता !!!

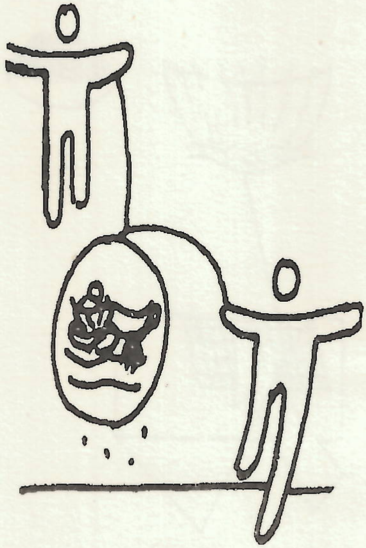

❖

प्रत्यक्षता

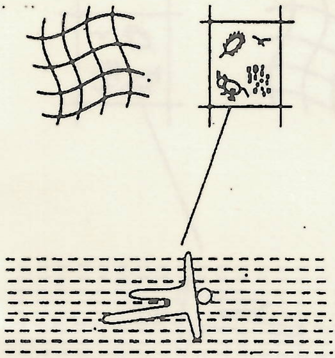

अहा
यह भयंकर वन
पावन बन गया
जिन राज के स्पर्श से
तब तो कहना क्या
जब यह वन
पावन बन गया
तो क्या? मैं चेतन
पावन नहीं बन सकता
अवश्य बन सकता हूँ
बस !
अब देरी का काम नहीं
विश्राम का नाम नहीं
एक मात्र ध्यान
चल पडा! उसकी खोज में
निकल पडा धर्म की ज्योत ले
ओ आत्मन्! बस
ध्यान रखो ! उस
पावन लक्ष्य का
कर लेगा तू उसकी
प्रत्यक्षता !

नश्वरता की विनाशता .....

ये अनित्य !
नहीं है नित्य
विनश्वर
मोह औ, विषय भोग
क्षण पल का संयोग
लाता है वियोग
फिर किस से करते योग
मूर्ख ये लोग
व्यर्थ बडाते मोह
एक मात्र अज्ञान ही
प्रज्ञान को खोता है
अनित्य की साधना में
नित्य की प्राप्ती कहां
नश्वरता की विनाशता ही
लाती है/जगाती है
सत्-प्रयत्न के साधन से
सत् चिन्तन के आराधन से
अविनाश आत्मिक सुख
नहीं होता
फिर कभी दुख ।

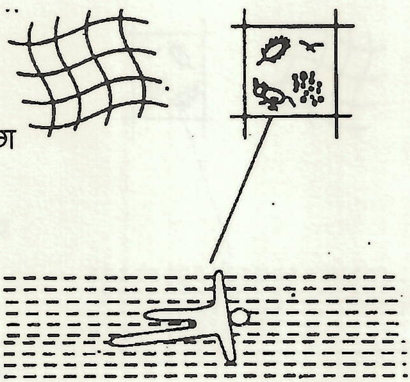

निर्वाणोत्सव

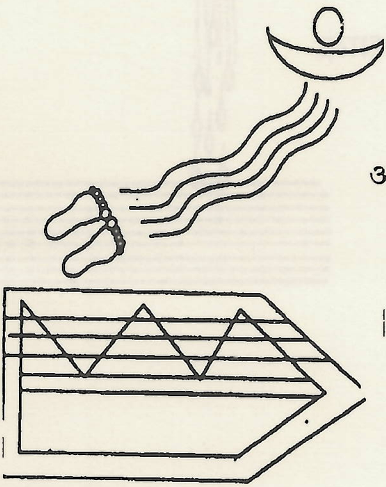

अहो ! वीर निर्वाण,
महोत्सव
उत्सव / सुखोत्सव
आया पावन पवित्र दिन
सिद्ध हुए थे जब वीर जिन
दिया था जिन्होंने
सदोपदेश
मार्गोपदेश / हितोपदेश
यही है परमोदेश
अहा प्यारा प्यारा / सबसे न्यारा
बनने सितारा
न लौटा है वह कभी-
इधर / उधर / किधर
न बडा था जिधर
पहुँचा वह अपने निजघर
जहाँ नहीं डर / होता निडर
अहो ! चेतन
चलो / तुम अभी चलो!
बढते चलो !! उनके मार्ग पर
देखो कितना था जगाया
पर, हमने एक न माना
धिक्कार ! धिक्कार तुझे शतवार
आत्मन्! अब तो पहुंचो
जग से पार।

शान्ति धारा

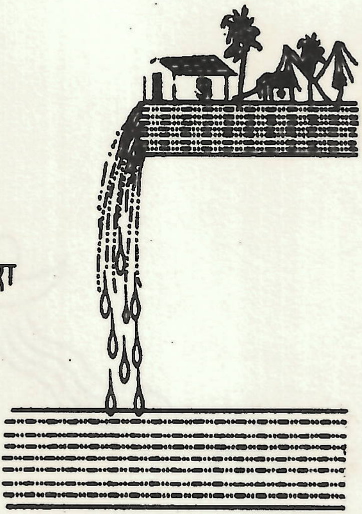

सद चिदानन्द
चैतन्य की
चरम प्रभावक
ज्ञान की / ध्यान की
यथार्थ सत्य काम की
धारा / प्रतिधारा / अपूर्व धारा
स्वयं स्वरूप की
शान्ति धारा
अहा चेतन!
स्याद्वादमय
कल्लोलों की लय
प्रतिलय
आलय हो ! निशदिन
प्रतिदिन / हर छिन
इसमें ।

हो धिक्कार

अन्दर / सुन्दर
धर्म धुरन्दर
आत्मा की आवाज
आयी है आज
अमर ध्वनि प्रति ध्वनि
सुनी ! नहीं सुनी क्या?
जगाया था
सजाया था
बताया था
पावनता का मार्ग
फिर भी
हो धिक्कार
कैसा मक्कार
न चल सका जो
उस मार्ग पर।

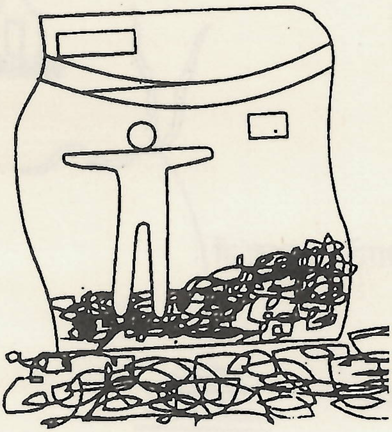

ये है त्रिशूल

आज का मानव
कैसा बनता जा रहा है दानव
जिसके हृदय में
न दया का निशान है
न धर्म का काम है/न शर्म का नाम है
एक मात्र भौतिक सुख में
होता जा रहा बे लगाम
इसी का नाम है हैवान
रे ! मानव चेत
कुछ तो हो सचेत
क्यों हो रहा है अचेत
आज का सुख ही
कल तुझे रुलायेगा भ्रमायेगा जग में
अत: जितना हो सके,
साध ले धर्म को
समझ ले इसके मर्म को
पकड़ इसकी मूल
मत कर इसमें भूल
ये है त्रिशूल
जो करेगा/दुख को समूल
नष्ट, विनिष्ट ।

भक्ष्याभक्ष्य

प्राणी ! अधिकांश
लीन है/विलीन
एक मात्र
खाने में, खिलाने में
न है ध्यान
का है भक्ष्य
क्या है अभक्ष्य
दिन/प्रतिदिन/निशदिन
नहीं है ध्यान
न विवेक का काम
बना बे लगाम
एक मात्र अपनी धुन में
लगता है न कभी खाया इसने
इसलिये लगा है खाने में
जो मिला उसे भी पाने में
अरे सोच/जरा तो सोच
क्या होगा इसका परिणाम
काम/हमारा नाम
होगा बदनाम/अतः तोड
छोड उन अभक्ष्यों को
हमेशा हमेशा को
लो मोड मुख उनसे/सदा सदा के लिए

❖

विषयानुराग

ये विषय
कितने मनोरम
और सुन्दर हुआ करते हैं
आदि में/प्राप्ति ही जिसकी
ला देती है अपूर्वतम्!
तञ्जन!! मनोरञ्जन!!!
ढेर सारा भी सुख
मानो आ जाता है/वर्षों का
यही कारण है कि
ये क्षण भर का राग
समेट लाता वर्ष भर के सुखों को
और प्रतिरुप में/दे भी जाता है
भव भव के लिए दुख
हे चेतन!
क्षण भर के सुख में
भव भव का दुख
क्यों लेता है मोल/विषयांध प्राणी
निर्मूलता लाता है जो जीवन में
लीनता ही मलीनता का
कारण बन जाती है उसकी
दिन निशदिन क्षण
प्रति क्षण, क्षण में।

❖

प्रत्यशा

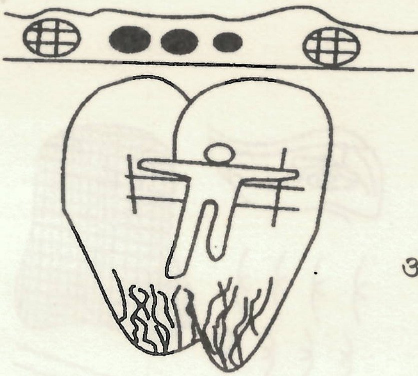

अहा!
दुनिया की चाह में
लीन है प्राणी
समय, समय, प्रति समय,
इच्छाऐं बढती जा रही
अपने वेग से/आवेग से
फिर भी प्राणी
मूर्छित सा हो रहा है
खो रहा है अपने आपको
बन पागल
आगल भी तो नहीं है इसका
जिससे होता है सुख
उससे दूर होता है
न जाता है झुक
सुख मिले तो कैसे
दुख के कार्य/दुख ही देंगे
न देंगे सुख कभी
यह जानो सही
आज का विषय सुख
वही कल का दु:ख रुप
धारण करेगा प्रति रुप
अत: प्राणी ! सावधान हो,
अभी भी ला होश
मत हो बहोश।

❖

अपनो में एक

समय की गति
अपने में
अविलम्ब धारा से
अबाधित रूप से
सव्ये की दौड से
अति/द्रुगति से
गतिमान/मतिमान
न किसी की इच्छा है
न किसी की प्रतीक्षा
बन एक मात्र
काल की पहिचान
समय-समय को
बता रहा है
कुछ बात भी
जता रहा है
फिर भी नहीं मालूम
प्राणी क्यों नहीं होते हैं
चेत/सचेत
अपने में एक
रहते अचेत।

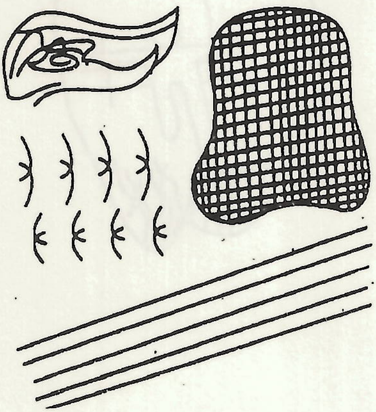

अपने को देख

उठ
ओ प्राणी
उठ-उठ
अतिशीघ्र उठ
कहां रहा है देख
दिखता है अनेक
न हो उसमें एक
एक
एक में हो जा एक

होकर सचेत
पाएगा विशेष
मात्र एक सुख
मिटेगा सभी दुख फिर क्यों होता है लेट
पत्थर की स्लेट
मत बन मिट्टी की प्लेट
एक मात्र दृष्टि
स्व में ही टेक
फिर देख!
अनुपम, अलख, निरंञ्जन
नहीं वचन गोचर
होती अगोचर
कसी सरोवर
ये ज्ञान मुर्ति
है चेतन देख/उसे ही देख
नित प्रति समय देख।

❖

एक रात

ये सुहावनी रात
विरहनियों की दाह को
समन कर देती है
चमन कर देती है/सफल
चिरकाल की आस को
समय निकला
हाथ पर हाथ आया/हो गये एक
अनेक जन्मों के लिये/लथ-पथ कामोद्धेग का वेग
हुआ आस्तव/प्रसव दु:ख का
वही रात्री/खिली चांदनी
योगियों को होती सुहावनी
विकराल खूंखार गुफा/भयावनी अटवी
दिशा, विदिशा, प्रति दिशाओं से
डरावनी आवाज/सुनते हैं योगीराज
फिर भी निश्चल, निर्मल
धर्म भावनाओं का होते ही संगम

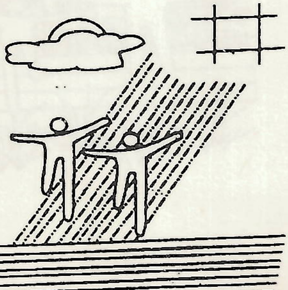

खिल जाता है उनका मन
लीन, विलीन, धर्म ध्यान के तेज से
अन्तर आलिंगन के जोर से
छूट जाता है परम तप का वेग
फिर नही कर्मोद्धेग
बस एक रात्री के श्रम/परिश्रम से
होता है प्रसव/उत्सव/महोत्सव
सुख के जन्म का/जिससे
खो देता हैसदा सदा को भ्रमण भवको
सुखी जीवन/कर यतन
हे चेतन ।

मार्ग गामी

मै जा रहा हूँ
शीघ्र/अतिशिघ्र
बढता जा रहा हूँ
खोज में उस तत्व की
हो है जिससे
ज्ञान भानु का प्रकाश
तमाज्ञान का विनाश
विकसित/प्रतिभासित
होता है जिससे प्रत्यक्ष
मार्ग/सन्मार्ग/मोक्षमार्ग
स्पष्ट होने से
मिल जाती है राह/उनको
जो भटके है,
अटके है
भव सागर के
गहन-अन्तर्तन में
सुन ले ज्ञानी
बन जा ध्यानी/गामी
मोक्ष मार्ग गामी

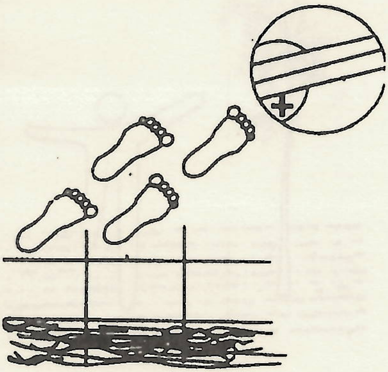

❖

नहाऊँगा

जा रहा हूँ
पर कहाँ? क्यों? कैसे?
विशाल सरिता
ज्ञान गंगा की ओर
चला जा रहा हूँ
बस नहाने/बहाने
अवगाहने के अर्थ
स्वयं बढ़ता जा रहा हूँ
धीरे-धीरे अपनी अनूठी चाल से
चलित हो चलते जा रहा हूँ
अहा ये सरिता
स्याद्वाद पूर्ण भरिता
कहती है कविता
न मिट्टी/न करदम
नसने को दुष्कर्म
रही है हरदम/तत्पर
अन्दर बाहर से
उसमें नहाऊँगा
खूब नहाऊँगा
संयम को लाऊँगा
कर्म मल नशाऊँगा
पाऊँगा जिससे
अविनाशी शिवधाम ।

प्रभु है ज्ञान दर्शन

अहो चेतन!
उठो तुम/शीघ्र उठो
सोते ही मत रहो
खोलो अपने नेत्र
धोलो मुंह फिर देख
निकालो मोह का कीचड
लगा है तेरे में भीषण
तब ही तुझे दिखेगा
अपना सच्चा रुप
प्रतिरुप/स्वरुप
बिना इसके बना कुरुप
विरुप-विद्रुप सा
अहा! अब तो धोलो
अंतर्मल को धोलो
नहालो/सजालो हृदय मन्दिर को
प्रभु है ज्ञान दर्शन
करले उसके दर्शन
अर्चन/अर्पण
करदे उसको अपना
सर्वस्व समर्पण,
जिससे फिर आयेगा/पायेगा
अपना आत्मिक सुख/अविचल सुख
अनन्त सुख।

❖

विनश्वर – जीवन

अपूर्व सा पुरुष
छोटा सा रुप
अनूठा ही सौन्दर्य
सुन्दर आकृति
चित्र-विचित्र/वर्ण से युक्त
इतना ही नहीं/अपितु
सुगन्ध विशेष से
युक्त/संयुक्त
आसक्त हुए हैं जिसमें
अनेक महापुरुष
ऐसा मन मोहक
चेहरे से प्रफुल्लित
प्रमुदित सुमन का
अस्त हुआ/गिर गया
डाल से टूट गया
क्षण भर में
वसुन्धरा की गोद में
जा पडा!

❖

व्यामोह

अहा!
यह विनश्वर
जीवन की दिशा
ये चार दिन की चांदनी
दो दिन की लीला
कुछ समय के महेमान
जिनकी सेवा से / चाकरी से
भूल गया - यह अज्ञानी प्राणी
अत: चैतन / धिक्कार
वार ! अनन्तवार ! तुझे
जो लीन हुआ था
विलीन हुआ था।
अब भी चेत
हो जा सेचत
इस योग से / मोह से
वस्तु से व्यामोह से।

ये नृत्यकार

अहा ! देखो
यह संसार का रंग
सुन्दर प्रपंच
दिखता है टंच
मनोहर/मनमोहक
अपनी चमक से दमक रहा
विषय गन्ध से महक रहा
नाना तरह की
चित्रकला का/अनूठा
सौन्दर्य भरा चित्रण
देखने से एकबार
जिससे लोग हो जाते है
आकृष्ट/उत्कृष्ट यह कलाकार
कैसा है देखो,
इसका आकार/प्रकार
ये नृत्यकार ।

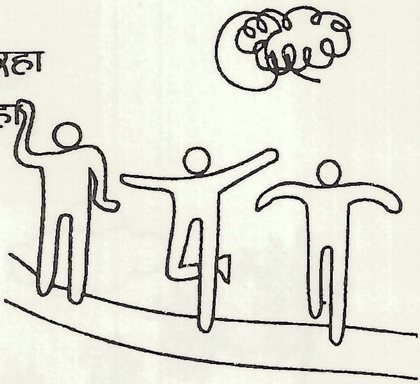

❖

मोह

मद के नशे में
जिसे/ स्वयं का ज्ञान नहीं
ध्यान नहीं/कुछ भी
चाह नहीं /परवाह नहीं
एक मात्र लगा है-नाचने
हे चेतन!

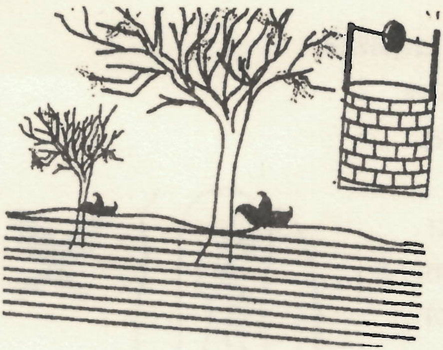

कैसा यह कृत्य
बना है भृत्य
कर रहा है नृत्य
तत् सादृश्य है
तेरा ये दृश्य
संसार के रंग मंच पर
गति के भव प्रपंच से
लिये हैं अनेक रुप तूने
नहीं जाना है स्व-स्वरुप तूने
कब तक भटकता रहेगा
अटकता रहेगा
संसार की इस विद्रूपता में

❖

प्रतिक्रमण

होता है कभी दिन में
निशा के भी तम में
जीवन के प्रत्येक क्षण में
गमन/आगमन
ससैन्य कर्मों का-प्रत्यागमन
कूटता है/लूटता है
खुले आम/आत्मा का परमधन
नहीं हैं जिसका नरम तन
गरम मन/न है उस पर
किसी का अनुशासन
दया भी गया-चला गया
एक मात्र क्रमण/आक्रमण
आक्रमण पर आक्रमण
करता है प्रतिक्रमण
फहराता है फिर ध्वज
जय की/विजय की
कर्मों के पराजय की
अतः आत्मन् कर तू
नित प्रति कर पालन/परम धर्म का
धर्म का मर्म
कृति कर्म
न हो इसमें शर्म।

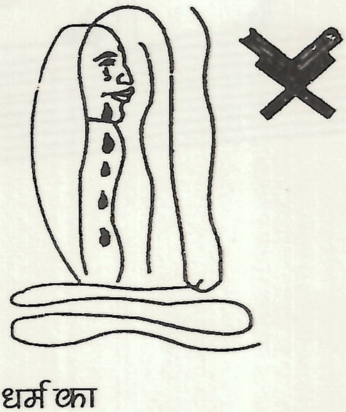

स्वाध्याय

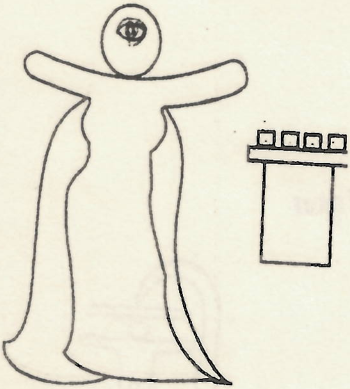

पढ़ना / पढ़ाना
समझना या समझाना
सच्चा मार्ग भी बताना
मात्र अध्ययन
पराध्ययन
चिंतन वा मनन
सुन्दर भाषण
कलम का लेखन
कविता कथन / सृजन
कैसा ये कीर्तन
प्रशंसा की राह
लोक रंजन या धन की चाह
बढाता है राह
होगा नहीं ये अध्ययन
कर्म निर्मूलन में समर्थ
रहेगा सदा व्यर्थ
करना पडेगा / बदलना पड़ेगा
कथित कर्म का ये अध्याय
तभी होगा सच्चा स्वाध्याय
एक मात्र / स्वयं के विकास के लिए
धर्म के प्रकाश के लिए
कर्म विनाशक / परम आराधक
पावन तप ही है
स्वाध्याय

कायोत्सर्ग

लगे है !
सेवा में जिसकी
हजारों/अरबों नरनारी
पोषण की होती है जिसकी
नित प्रतिसमय तैय्यारी
आज अथवा कल से नहीं
जनम से मरण तक
कर्म करता है/दुःख सहता है
यह जीव/सजाता है
हर समय जिसे किंकरों से कई गुना
करता जो चाकरी
फिर भी धोखा दे देती है,
यह विनश्वर देह
छोडकर चल दे देती है
यह विनश्वर देह
छोडकर चल देती है
छोडा है जिसने
भव में भव-भव में मुझे
सचेत हूँ, सावधान हूँ,
अब नहीं छोड सकती ये
छोडूंगा मैं ही इसे
इसीलिये छोडता हूँ
स्नेह अरुद्वेष इससे
प्रयत्नशील/गतिशील
समय पर सल्लेखना के
अगर आये उपसर्ग तो
दूंगा उत्सर्ग इसको
बस लेकर मुद्रा
कायोत्सर्ग

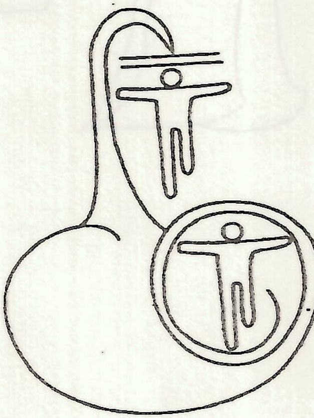

सत् ध्यान

तन को तान
लगालो ध्यान
जीवन महान
होता है
कुछ ही समय में
विस्मय/आशय
यथार्थ शुद्ध साधन से
धर्म के आराधन से
हे चेतन !
अपावन/पावन
यह जीवन
धर्म मय/शिवमय
शुद्ध स्वयं के
स्वरूप मय।

ईर्या समिती

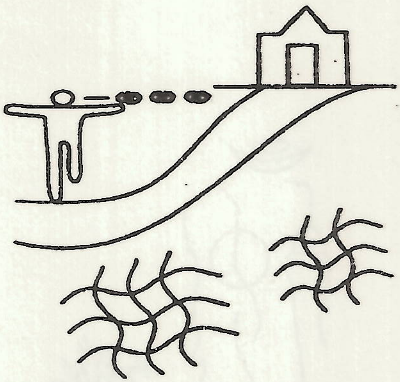

अनर्गल
हलन/चलन
गमन ही करते है
कर्मों का आगमन
अभिगमन/प्रत्यागमन
जो कर देते हैं
शांति का शमन/बेशर्म
बना देते हैं आत्मा को
हे आत्मन्/मत देख
यहाँ वहाँ मत देख
एक मात्र देख
चार हाथ/गमनाभिभूत भूमि
ये क्रिया सीमित ही
लाती है ईर्या समिती
खोती है जो चतुर्गती
देती है अनुपम गति
मति/पंचम गती

भाषा समिती

कैसी ये शान
नहीं है तान
मुख की लगाम पर
जिसके है वे लगाम / बना शैतान
कहूँ किससे
मुख की ताल
रही वे चाल
निशदिन / प्रतिछिन
नहीं रह सकती
सत्य की धारा उसकी
अत: प्राणी सम्हाल, वाणी
भाषा समिती ही
रक्षा करेगी
सत्यव्रत की
नित प्रति समय
सुन्दर समिती
हित कारक ही वचन
बोल तोल कर
हृदय से।

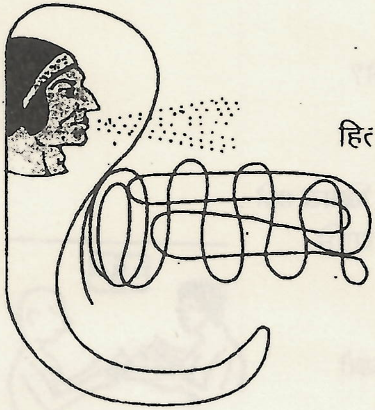

एषणा समिती

दीक्षा के पूर्व ही से
भजन ही रहता है
एक मात्र साधन
मनन ही होता है/आराधन
फिर भोजन का विकल्प कहाँ!
कुछ भी निश्चित नहीं
मिले अथवा न मिले
मिले भी तो कब? कहाँ? कैसे?
किसी पर भी अधिकार नहीं
न आधार किसी का
न कर सकते साकार / इस विषय को
बस ! एकमात्र/लब्ध की ही प्राप्ति
संतुष्टता की निशानी
किन्तु, तुम अगर साधक हो
आराधक सच्चे तो / ध्यान रखो
निर्दोष आहार ही ग्रहण कर
वैराग्यवर्द्धक/संयम साध्यक
लोकेषणा की इति ही
लाती है ऐषणा समिती
आहार लेने पर भी/तपस्या की पूर्ति
कर देती है ये समिती
ला सुमति/तभी पलेगी ये समिती।

❖

आदान-निक्षेपण समिती

अहा दया
मन शुद्ध भया
कैसी कितनी दया
साधुओं की हार्दिक साधना ही
रोम रोम में/समाहित कर देती है दया
मारूंगा नहीं/कभी किसी को
यह तो सर्वविदित है/किन्तु
मरे भी न कोई/हमारे निमित्त से
चित्त की वृत्ती से
यह विशेषता पाई है/इनके ही
चिन्तन/मनन एवं साधन ने
जब कभी भी आओ, जाओ
रखो, उठाओ, खुजाओ
अथवा आसान लगाओ
शयन करो या करवट बदलो
अहर्निश प्रति समय
सावधान विशेष वृत्ति ही
लाती है आदान निक्षेपण समिती
अपूर्व ये वृत्ति/दर्शाती है ये सच्ची
साधना ! आराधना को
विराधना के भय को।

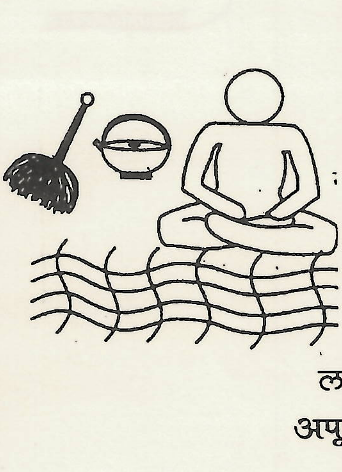

❖

सारों का सार

हे विराग,
कर तू विचार !
कुछ तो विरागता का
निर्मोहता का नाम
क्या है ध्यान
कहां हो, किस महल पर
या मंजिल पर
अरे ओ जिनवर के नन्दन
लघु नन्दन, आओ, आ जाओ
अपने असली रूप में
न रहो तुम नकली रूप में
छोड दो, न सार है इसमें
यही है सबसे बडा सार
सारों का सार/महासार
परम है/पावन है
अनुपम है, चेतन का सार
और सभी है असार
बिसार उनको ।

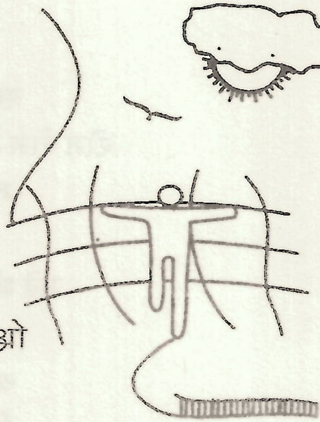

❖

उत्सर्ग समिति

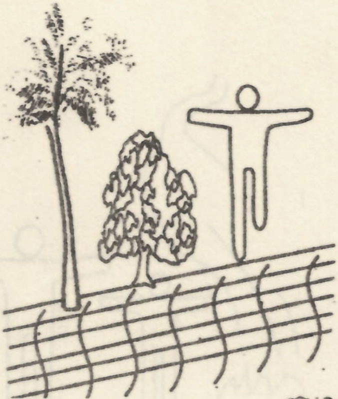

अहा!
इनकी ये सघनता
कितनी सघनता
अहर्निश / हर कार्य में
प्रति समय लगे रहते हैं
सुन्दर समिति साधना में
रखने में उठाने में
फिर भी ठीक है / किन्तु
असावधान नहीं होना
किंचित् भी मलमूत्र के क्षेपण में
सावधान / निर्जंतुक स्थान
देखना प्रमार्जन करना
फिर कहीं / विसर्जन करना
ये निष्ठापन समिति
ऐसी विशेष वृत्ति / आसाधना से विरचित ही
कहलाती है साधना / ये ही तपाराधना
करती है कर्मों की विराधना
आत्मन् ! पालन कर ! अविलम्ब इसका
यही सच्ची पूर्ण दया को
विकसित करेगी संयम की कला को।

❖

दर्शन

देखा
गौर से देखा
देखता ही रहा
फिर भी/ देख न पाया
सिर्फ –एक मात्र
पाषाण की मूर्ति ही
मन में झलकती रही
किन्तु आश्चर्य है कि
वह परमात्मा की मूर्ति
नहीं झलक सकी
एक मात्र पाषाण की कृति
कला कृतियों में ही
पहुंची हमारी दृष्टि / किन्तु नहीं पहुंच सकी
मुर्ति के मूर्त्य स्वरूप में
आत्मन् ! मूर्ति का आधार लो
कोई चिन्ता नहीं किन्तु
उस मुर्ति के मूर्त्य स्वरुपी
विद्यमान परमात्मा को निहारो
परमात्मा के देखने से
परमात्मा बन जाओगे ।

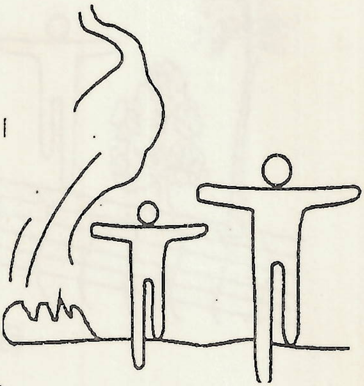

❖

नया वर्ष

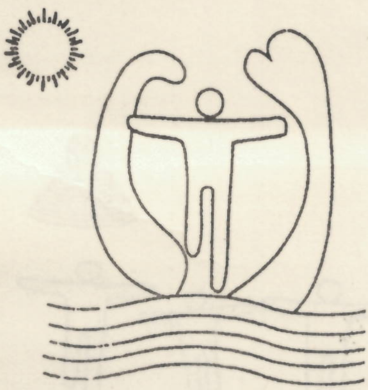

वर्ष
नया वर्ष
अन्तर हर्ष
वर्ष, हर्ष, परामर्श
हर्ष वर्ष का सार्थक है
हर्ष बिन वर्ष निरर्थक है
हर्ष की सच्ची कुंजी
हृदय की पावनता है
त्याग है, तप है, अहिंसा है
जीवन की धारा
पावनता पर आधारित है
जितनी ही इसकी अभिवृद्धि
सुख शान्ति का स्त्रोत
उतना ही अधिक/ गतिमान होता है
पावनता की प्राप्ति
धर्म पर ही आधारित
साधित है परम पुरुषार्थ से
सुन्दर आचार
विचार पर आधारित हैं
साध्य अगर पावन है तो
साधन भी होगा पावन
जो कि साधक को भी
बना देगा पावन।

एक ही राग

भूल जात है प्राणी
जिसके आवेश में
बेहोश सा दिखता है
न हित का ध्यान रहता है
न अहित का ख्याल
मात्र एक ही जोश में
अहा! वह
अनल का रूप
क्षण भर में ही लाता
प्रगट अपना रूप
छोटी सी चिराग
खो देती है विराग
न रहता है विशुद्ध राग
न शुभ राग
एक ही राग / अशुभ राग
लगाता है आग
अब तो चेतन जाग।

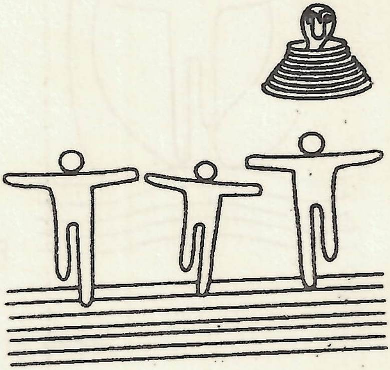

ये - रोग

धिक्कार है
निस्सार है
असार
यह विषय भोग/कैसा है ये रोग
जिससे सारी दुनियाँ
आक्रान्त है
क्लान्त सदा से
दिखने में मनोरम
चखने में विषसम
रहते हैं हरदम
डसने में असिसम
यह विषय भोग
आत्मन्!
फंसा देते हैं ये
जीव को / सदा को
भ्रमाते हैं जग में
भव के भीषण वन में
कण-कण में
प्रति क्षण के ये दुख में ।

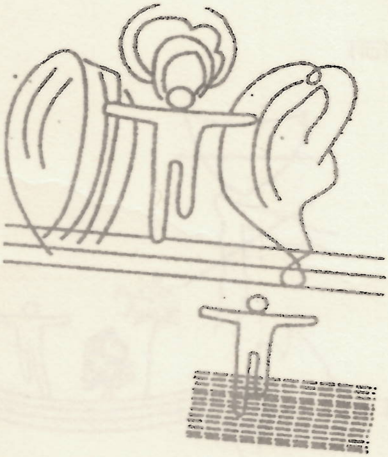

❖

ये कोप बना देता है विद्रूप

ये कोप
उड़ा देता है होश
बना देता है बेहोश
नहीं रहती फिर खबर
क्या है मुद्रा पर सबर
रोष की लहर
बहा देती है/मिटा देती है
जीवन भर की सत्य साधना
कर देती हैविराधना
क्षण भर का प्रकोप
जब होता आरोप
कर देता सर्वस्व लोप
इतना ही नहीं
कलह का मूल
वैर का शूल
घात/परघात/आत्मघात
पर भर में दिखा देता है
अपने अनेक प्रत्याघात
आघात का रूप
स्वरुप/प्रतिरूप
चेतना तुझे बना देता है विद्रुप।

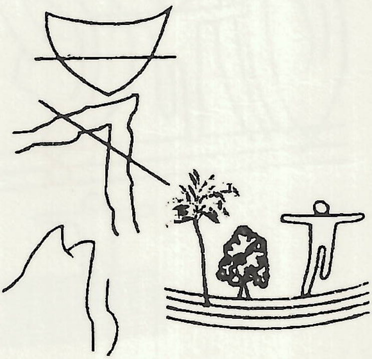

❖

अभिमान

गिराता है जो
आन को/शान को
श्रेष्ठता के निशान को
यह मान
मिला देता है मिट्टी में
बहा देता है नदी में
फंसा देता है कर्दम में
क्षण भर का अभिमान
खो देता है सदा को
सदाचार/सुविचार/शिष्टाचार
हे आत्मन्
जीवन का नाशक
विनय विनाशक
अशान्ति का प्रदायक
दुख का जनक/यह गर्व
मानता है अपने को महान
नहीं मानता है
पर को अपने समान
नहीं है जिसका ध्यान
क्या कहूँ उसकी शान
ये मान/अभिमान
प्रत्यभिमान

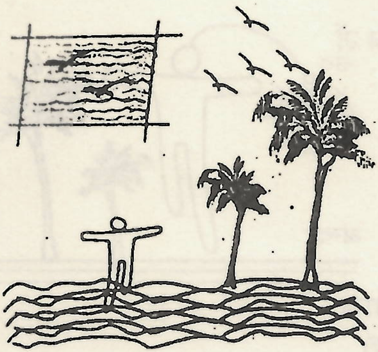

मायाचारी

न आया
न पाया/न बताया
किसी ने अभीतक
जिसका अन्त/कहते है संत
यह है अनंत/माया
दिखने में सुन्दर
सुनने में सुन्दर
होती असुन्दर
पता नहीं कुछ/क्या है अन्दर
कथन की श्रृंखला
न है/तन में/मन में/जीवन में
मन की धारा न बहती है
तन में/वचन में
स्वयं के सदन में
काय की प्रक्रिया
शून्य है, मन से/वचन से

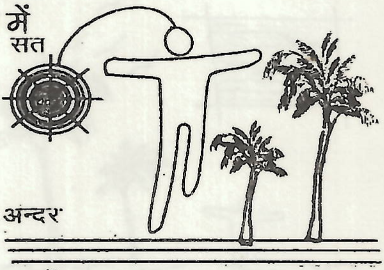

ऊंची दुकान/फीका पकवान
मायाचारी/दिखती है प्यारी
होती है खारी/यह क्रिया सारी
सारी/खारी/ व अरि
यह है मायाचारी।

❖

लोभ मचाता है क्षोभ

अहो आश्चर्य है
देखकर / प्राणी को पेट भर जाता है
अपूर्ण / पूर्णता को प्राप्त नहीं रहता है ध्यान
जब उदर में / फिर भी प्राण चाह रहा है, कुछ मांग रहा है,
कराह भी रहा है पेट भरा किन्तु / पेटी भरने की राह है
बस ! फिर कुछ नहीं है ध्यान न जान / न ज्ञान / होता है वे
लगाम
एकमात्र बढ़ती है चाह पैसा हुआ मकान की चिंता
मकान हुआ दुकान की चिंता दुकान हुई संतान की चिंता
मकान हुआ दुकान की चिंता दुकान हुई संतान की चिंता
चिंता ही चिंता / चिता का रुप ले लेती है
अपना फिर असली रुप दिखाती है
हृदय जलता है / तब कहीं पेटी भरती है
नहीं रहता फिर न्याय का ध्यान
समय का ज्ञान / धर्म का भान एकमात्र आर्तरौद्र ध्यान
फिर धीरे-धीरे जनम लेता है,
पाप का बाप / स्वयं-लोभ / मचाता है क्षोभ / बढ़ाता है भवरोग
कुछ समय का योग लाता है वियोग न खाया / न खिलाया
रह गया सारा संग्रह ग्रह / आग्रह प्रत्याग्रह है
यह भी तो है / एक ग्रह लोभ।

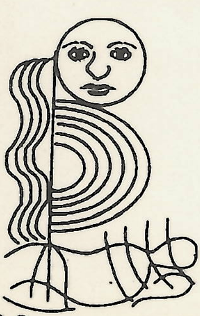

दुःख है

खेद है।
प्राणी
दिन-दिन
प्रतिदिन
जा रहा है/बढ़ता
अपनी राह में
किन्तु राह
वे राह हो रही
कुछ चाह रही
परिग्रह की दाह हो रही
आगार/सागार
लीन है/विलीन इसमें
इसका दु:ख नहीं/किन्तु
दु:ख है तो इसका
जिसने त्यागा है इसको
वह भी/होता जा रहा है
लीन/विलीन
तल्लीन इसमें

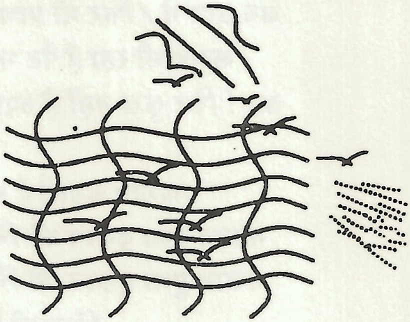

❖

दया

होगी !
न होगी कैसे
हिंसा, प्रतिहिंसा
त्याग करने का
कराने का ना बताने का
फिर भी अगर
न होगा संवर
उसके ही साधन का
प्रतिपादन व उत्पादन का
यह क्रय/न होगा विक्रय
जो अवश्य ही इसे
रोक दिया/छोड़ दिया
हृदय से पाली दया
तो भव से पार गया

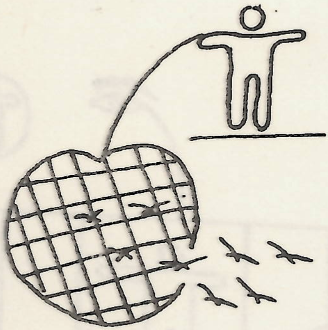

बुद्धिमानों के लिये यह उचित नहीं कि वे किसी को सन्यासी होने से रोकें, उन्हें विधि ही बतलाना योग्य है।

॥१७/११॥ (क्ष. चू.) आ. वादीभसिंह॥

वीतराग प्रभु दर्शन

हे भव्य पुञ्ज
दृष्टि को खोलो
देखो! परम वितरागी मुद्रा
शान्त स्वरूपी/मनोहारिणी।
विघन निवार्णनी
धर्म प्रसारिणी जिनेंद्र मुद्रा
इनके दर्शन से
शीघ्र दूर हो जाते हैं
विघ्न! निर्विघ्न हो जाते हैं
कार्य आर्य पुरुषों के
अहा चेतन/निहारो उन्हें!
उतारो उर में/
बनके उनके दास
बिठालो सदा
पवित्र हृदय कमल में

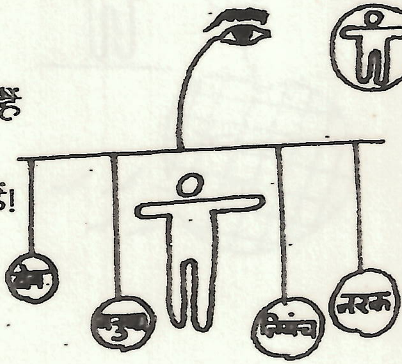

❖

> जो मोक्ष मार्ग रूप हितकारी शास्त्र है उनका वाचनादि अध्यन है वह स्वाध्याय है। तथा बारह प्रकार के तपों मे स्वाध्याय के समान कोई दूसरा तप नही है।
>
> – आचारसार अध्याय ६ गा ८५

जिनेन्द्र मुद्रा

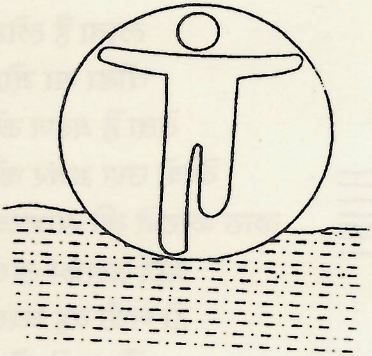

ओह ! हे आत्मन्
वह है ! देखा!
कैसी, परम मुद्रा
सुमन भी खिलता है
जिसको देखने से
अहा ! झलक रही है
सारे बदन में
यह विरागता-वीतरागता
अन्दर का प्रकाश/
हृदय का विकास
प्रकट हो रहा है
जिनके पावन तन में
हो ऐसी ही विशेषता
मेरे भी इस अधम मन में
बस ! है यही प्रार्थना
जीवन के प्रत्येक क्षण में
समय में/नेत्रों के प्रत्येक पल में

❖

जिस प्रकार गरुड की मुद्रा विष का नाश करती है उसी प्रकार जिनेंद्र देव की मुद्रा पाप का नाश करती है।

-आचारसार २७/८

विषय विकास

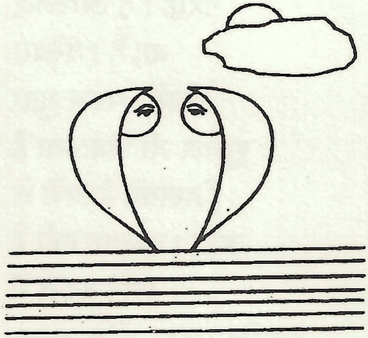

ये मोह
मचाता है क्षोभ
लाता है लोभ
थोडा सा मोह
देता है मरण को
देखो उस भ्रमर को
काठ काटने की सामर्थ्य
नहीं उसका अर्थ
हो गयी वह व्यर्थ
कैसा ये मोह
सोचा था ये पराग
कर देगा सुख प्रकाश
किन्तु क्या? होगा जीवन विनाश
न थी ये मन में आस
परन्तु हो गया जीवन का आज
थोड़े से सुख में नाश
विषय विकास
जीवन विनाश
अपने में ही
हो गया सत्यार्थ ।

❖

मेरे ये कदम

मेरे ये कदम
रहते हैं हरदम !
अत्पर / तत्पर
बढ़ने को निशदिन
प्रतिदिन / दिन / हरदिन
यह गुजर / कैसा सबर
नहीं है खबर
वर हो वदन
साधन सघन
निश्चित
सुनिश्चित
करूंगा प्राप्त
अवश्य
शिव का सदन
जिन गुण का धन
कहता है मन
बढ़ेंगे सदा
मेरे ये कदम

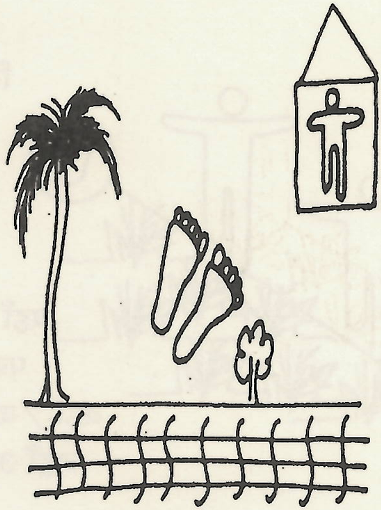

❖

शुभोपयोग की प्रवृत्ति अशुभोयोग का संवर करती है और शुद्धोपयोग के द्वारा शुभोपयोग का निरोध जाता है। – कार्तिकेयानुप्रेक्षा गाथा ६३ / आसवा.

विराधना/साधना

अन्तरात्मा का प्रश्न
जीवन का सुख
साधना में या विराधना में
दोनों का उत्तर एक
साधना विराधना के बिना
नहीं हो सकती और
विराधना साधना के बिना
नहीं हो सकती
जहाँ साधना है/वहाँ
विराधना अवश्य है
और जहाँ विराधना है
वहाँ साधना अवश्य है/जहाँ
परमात्मा पद की साधना है
वहाँ/बहिरातमा की विराधना है
जहाँ अन्तर सुख की साधना है
विराधना के बिना
साधना नहीं हो सकती/ और साधना
विराधना के बिना नहीं हो सकती
अत: साधना की सिद्धि ही
आराधना का कारण है।

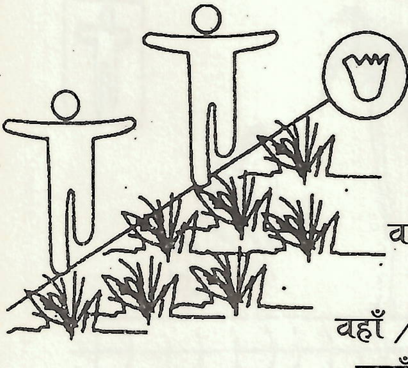

अकेला

प्रभात!
अन्धकार का विनाश
सूर्योदय का प्रकाश
लाता है/जगाता है
सुप्त जगत को
भगाता है मोह नींद को
ये प्रभात की बेला
शुरू होता है मेला
फिर भी देखो
न कुछ भेला
न कुछ चेला
होता अकेला
बस! हो इसी में
एक मात्र
ठेलं ठेला

❖

कोरा जीवन

दुनिया में
आया-आया
अनेक बार प्राणी
नाना तरह के
भय को पाया और विनाश भी
अनेक बार इसने
हर भव में
कमाया/खाया/और गमाया
फिर भी रह गया
सब का सब यहाँ ही
कुटुम्ब परिवार यश भी
रह गये सभी के सभी
नहीं गया कुछ साथ में
रह गये खुले हाथ ये
फिर भी क्या किया
क्या नहीं किया
कुछ भी नहीं किया
रह गया एक मात्र
कोरा जीवन
सार जीवन
निष्प्रयोजन!

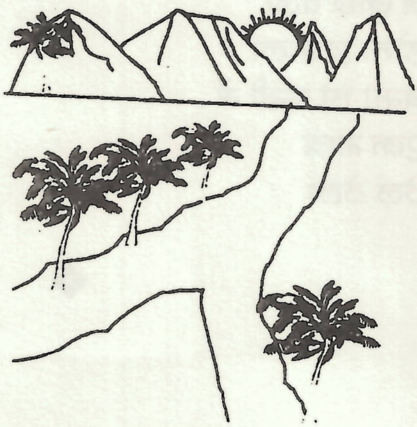

परम धर्म सच्चा

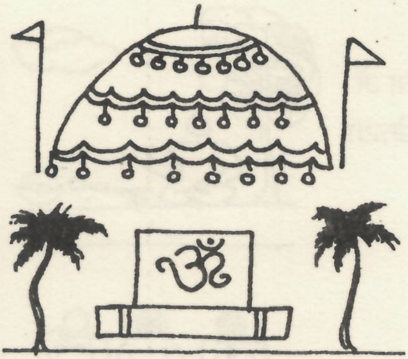

हे चेतन
धर्म का निशान
नहीं है काम
एक मात्र नाम
नाम का ही काम
करत है प्राणी
कहते इसे धर्म
नहीं समझते
धर्म का मर्म
धर्म की आढ़ में
एम मात्र/पूजा प्रतिष्ठा
धन का लाभ/कहीं
यश की इच्छा रही
सुख की प्रतिक्षा की / तो कहो
कैसे हो कार्य सफल
ये परम धर्मसच्चा
न दे सकेगा फल अच्छा
कहत है बच्चा
तोड़ दो / छोड दो
उक्त धारणा अमर हो
धर्म सच्चा/श्रमसाधन सच्चा
तो क्यों न होगा/हर कार्य अच्छा ।

❖

भवभ्रमण

पाया जनम
आया मरण
क्या किया जीवन में
जन्म में पावनता के क्षण में
क्या करना था, क्या किया
सोच ! क्यों हो बेहोश
दिनों की गणना
न होगी शरणा
एक मात्र धर्म आचरना
कल की परवाह
झूंठी अफवाह/न करना
कभी किसी भी हालात में
यही है वीर संदेश/श्रेष्ठ आदेश
कहते हैं जिनेश, शीघ्र /अतिशीघ्र
बढ़ जाओ/सत्य मार्ग पर
पावन मार्ग पर
न होगा कभी फिर
भ्रमण/परिभ्रमण
भवभ्रमण

❖

चर्या

ये निराली चाल
चलती रहेगी
कब तक
भ्रमण की
मरण की
धर्म हरण की
चर्या ही
ला देगी
किसी
एक दिन
स्वयं -आप
तापं/पश्चात
इसका आघात ही
देगा अपूर्व मोड़
जीवन में जोर
तभी मचेगा शोर
एक मात्र दौड़
होड में
आंत्म
सुरक्षा की
संरक्षा की ।

❖

साधना

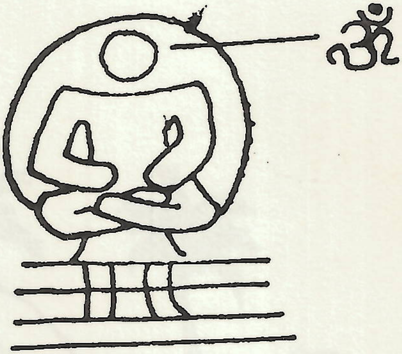

मरी
ये मनोकामना!
धर्म की साधना/या
कर्म की साधना?
धर्म की साधना,
देती है अराधना।
अराधना को/खोती है
कर्म साधना
अत्याशादना ही
विराधना का रुप लेती है
बदल देती है छिन में
सारे जीवन की साधना को
फिर होता है प्राप्त
अशान्ति पूर्ण संताप
दुःख का प्रताप
होता है आप/एक ही क्षण में
दे देती है आप
अपूर्व सौख्य साम्राज्य
शिव साधन का,
मोक्ष आराधक का/राज्य
स्वयं-शीघ्र सत्य
धर्म साधना

❖

सुख ही सुख

दुनियाँ की ओर
भव भ्रमण की ओर
दोड़ाता जा रहा है
अपनी शक्ति को जोर से
ये संसारी प्राणी / कभी
न चाहता है दुःख
हर दम प्राप्त होवे दुःख
हर दम प्राप्त होवे सुख
इस ही विचार धारा में
निशदिन बढ़ता जा रहा है
विचार करते हैं / किन्तु
आचार से हटते हैं
सुख चाहते हैं किन्तु
साधना से डरते हैं
दुःख की साधना से
सुख नहीं मिलेगा
अधर्म विराधना ही
आराधना पूर्ण / सुख
देता है धर्म साधना
न होता फिर कभी दुख
होता सदा सुख / एक मात्र
सुख ही सुख

❖

भक्त भावना

प्रभु एक
भक्त अनेक
भक्ति विशेष
पर/फिर भी
अशेष
न रहे शेष
यह है कामना
पूर्ण होवे भावना
न करना पड़े कभी
दु:खों का सामना
ये सभी की धारना
पर कैसे होवे सफल
प्राप्त फल
मोक्ष महल
जब तक नहीं है
सच्ची भक्ति
न पूर्ण शक्ति
मात्र मुक्ति
तो कैसे होगी
प्राप्त मुक्ति

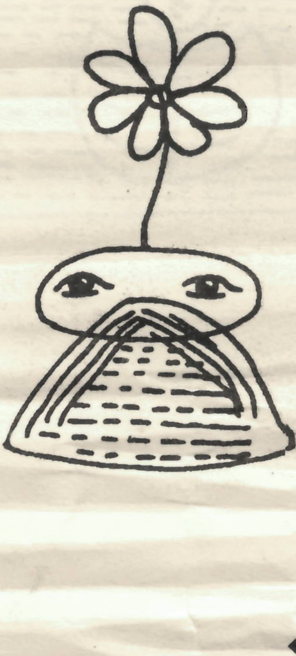

साधना कब तक

कहा !
कैसे कहूँ
हृदय का सुझाव
ये मेरे भाव
नदी सम बहाव
बढ़ाते है लगाव
फिर भी नहीं मालूम
क्यों नहीं है चाव
न किसी को सताव
न बहकाव
शुद्ध स्वरुप को ध्यावो
तो सिद्ध पद पावो
न कभी दिखाव
न किसी को सुनाव
स्व -गुणों की खान
शंसा/आशंसा/प्रशंसा
तभी तो होगी प्रसन्नता
बस! स्वयं की
साधना में लग जावो
लगे भी रहो,
तब तक/न प्राप्त होवे मुक्ति
जब तक

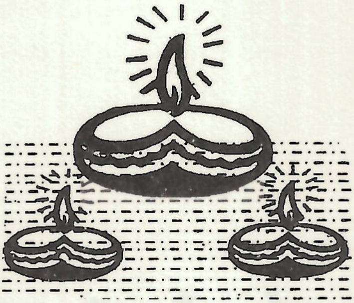

❖

मलीनता का मूल

अगर
तुम्हारा
मन है मलीन
तो मन होगा मलीन
वचन होंगे मलीन
चेतन होगा मलीन
गर न होगा
मन मलीन
तो कैसे होगा
तन मलीन
चेतन मलीन
एक मात्र विलीन
स्वयं विशुद्ध क्षण में
हो सकती है साधना
विषय विराधना
धर्माराधना
उसी विशुद्ध क्षण में
हे आत्मन !
बनाले तू अपने आपको
पावन, परम विशुद्ध क्षण में

विरागी सन्त

ये वीतरागी सन्त
न है कोई प्रपंच
न परिग्रह का रंग
न विषय का अंश
होते हैं निर्ग्रन्थ
चाह का किया अन्त
कैसे ये महन्त
रहते हैं हर दम
आगम का एक वचन
ज्ञान ध्यान में तन मन
स्वपरोपकार में निशदिन
लीन/विलीन/लवलीन
आत्म साधना मय हर छिन
अहो आनन्द का धाम
होता है इनका काम
मन पर लगाम
फिर कहां दुख का नाम
ये हैं महान्
इनको पहिचान
हे आत्मन् !
ले ले इनसे ज्ञान
लगाले अपना ध्यान
बनाले अपना ध्यान
तभी होगा सिद्ध काम
प्राप्त होगा मोक्ष धाम ।

❖

गुरु सेवा

मुनियों की सेवा
देती है मेवा
मैंने देखा
मुख में नहीं
कर में नहीं
घर में नहीं
की है अगर हृदय से
विशुद्ध अपने मन से
तन से / वचन से / धन से
तो देती है अवश्य
ऐहिक सुख / पारलौकिक सुख
पारमार्थिक सुख
जन्म जन्म के लिए
नश जाते हैं जिससे
सभी प्रकार के दुःख
देखा मैंनें / खुद
तो क्यों न जाऊँ झुक
इनके पवित्र पदों में
न है इच्छा / न वांछा
किंचित् भी मेवा की
संसार का मेला / अनंतबार देखा
फिर क्यों होऊँ भेला
करूं अब गुरु की सेवा
प्राप्त होगी तभी / आत्म रेखा

जीवन महान

प्रभु
पूजन/कीर्तन
न है वे काम
निष्काम
ये है महान
लगालो –ध्यान
अगर
गृहस्थी रिक्त
दृष्टि युक्त
संयम संयुक्त
विराधना मुक्त है
तभी ये सहारे
गगन के तारे
भव पार उतारे
भव्य जन
हृदय धार/तो
हो जाये कल्याण
जीवन महान छोड़ो विश्राम
प्रभु का गुणगान
निज का गान
कर लो अविराम

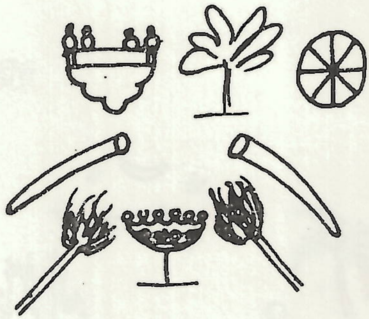

❖

स्वपर प्रकाशक / तारक

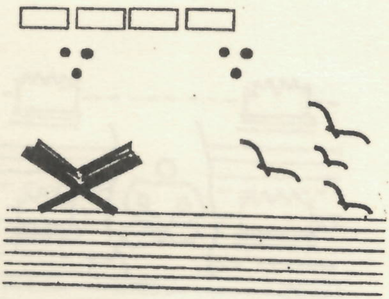

भीषण वन
कितना निर्जन
रात्री का समय
होत है विसमय
अन्धकार का साम्राज्य
चारों ओर छाया / सन्नाटा
वृक्षों सी रुमझुम
पत्तों को जागृत करती हुई
मन्द सुगन्ध बयारी
चली जा रही थी
सीधी गुफा में
प्रज्वलित दीप था
अपनी अनोखी गति से
ज्वलित ज्योति का नृत्य
चल रहा था ।
जलता प्रदीप
बता रहा था
कितनी बात / सुना रहा था
जनां रहा था स्व - पर प्रकाशक
दीप / ज्ञान, गुरु की उपमा
ये है स्वपर प्रकाशक
तारक / वारक
भव पार उतारक

संत प्रभावना

संत
जितने होंगे
भव दु:ख से भयवंत
उतने ही शीघ्र कर देंगे
भव भ्रमण का अन्त
उनकी ही साधना
सत्‌साधना/आराधना
कर देगी मन को प्रसन्न
तत्वों का चिंतवन
करुणा मयी भाषण
सावधनता पूर्ण कार्य
देख कर जीवों के
बदल जाते हैं हर क्षण
जीवन के प्रतिक्षण
होंगे विशुध्द क्षण
समर्पण हो जायेंगें फिर
धर्म पर/शक्ति भर
जुट जायेंगें/मग पर
बढ़ने में चढ़ने में
मुक्ति सोपान
ऐसी हार्दिक भावना
करेगी सच्ची प्रभावना

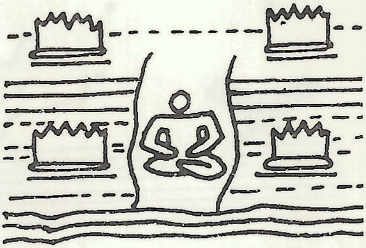

बुरी आदतों से सुधार

मैं
देखता हूँ जिधर
इधर / उधर
हर तरफ से
करुणा मयी पुकार
दुःख मयी संसार
न कुछ है सार
असार ये संसार
नहीं जिसका पार / आपार
जब देखो तब
दुःख रहता सवार
करता है हर दम
निर्दयता से प्रहार
हो जाता है संहार
बचूं कैसे बचूं
यही विश्व की पुकार
सुनते हैं जगदाधार
देते हैं समाचार
सुधार-सुधार
बुरी आदतों को सुधार
होवेगा तभी
सभी साकार

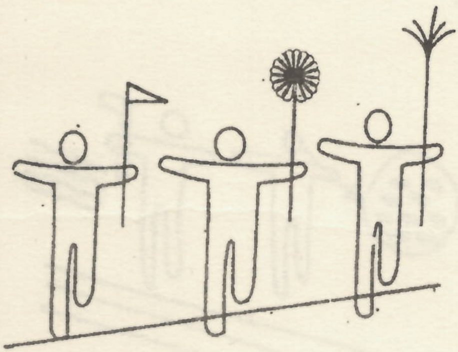

❖

संताप

जीवन चिराग
होता है राग
लगाता हूँ आग
बढ़ाता है दाह
जिसकी चाह
ये विषयानुराग
खो देता हैं
धर्मानुराग
साधना वा आराधना
कर देता है विराधना
किञ्चित क्षणों का काम
जीवन तमाम
ध्वस्त/विध्वस्त
शान्ति का अस्त
फिर होता है ताप
कैसी ये बात
बड़ा ही पश्चाताप
कर्मो का शाप
भोगता है स्वयं आप
अहो प्राणी जाग
अबतो जाग
न होगा पुन: कभी
संताप

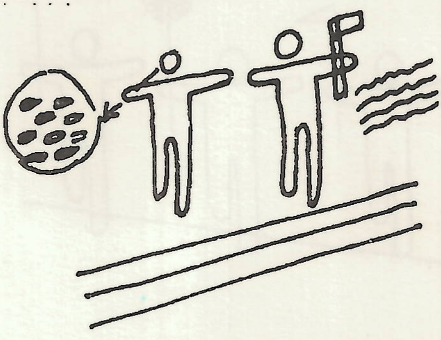

❖

संसर्ग

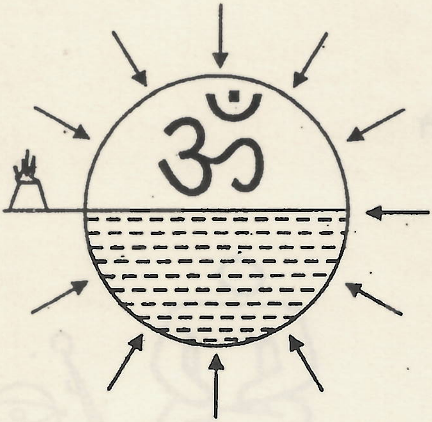

संसर्ग ही
गर्त है
नर्क के
दुखों का
सुखों का
विधातक
आकुलता
प्रदायक
आशंसा
प्रति / दिन निशा
हरपल की चिन्ता
बनाती है चिता
देती है जला
सबला को भी
कर देती है अबला
आँखों से अंध
कर देता है बंध
पर सम्बन्ध
दुःख देता अनंत
इसीलिये ही इसे
छोड देते हैं सन्त

❖

वैय्यावृति

कामना
अनवरत साधना
जिसकी
दे देती है
धर्माराधना
अपनी सच्ची वृत्ति
गुरुओं की वैयावृत्ति
आपूर्ण/पूर्ण
संपूर्ण दु:खों की
विराधना
कर देती है
सदा को
पाप/ताप
पश्चाताप
सभी को समाप्त
एक ये
आराधना
गुरु उपासना
धर्म साधना

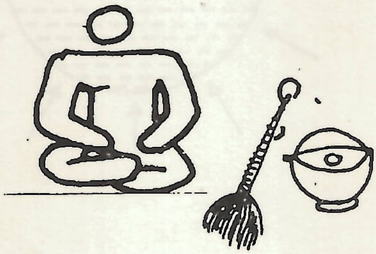

❖

जीवन सफल

धर्म काज
अहो भाग्य
सौभाग्य
हमारा आज
प्राप्त हुआ जो काज
धन से नहीं
वचन से नहीं
तो तन से क्यों हटूं
किसी से क्यों कहूं
क्यों न शीघ्र करुं
यही है धर्म साधन
आराधन
पावन बनने की
कला/दवा
दु:ख हरणकी
प्राप्त काज न किया
तो धर्म साधन कहां हुआ
न होगा/होगा कैसे
प्राप्त फल
धुलेगा मल
अत: कर लो
जीवन सफल

❖

उसका दर्द

ईती
आप बीती
जब तक नहीं बीतती
दिखता है तब तक
हर काल
एक मात्र जाल
शब्द जाल
झूठा आलाप
पर का प्रलाप
होता है व्यर्थ
कैसा अनर्थ
न भाषता सत्यार्थ
उसका दर्द
देखकर हर्ष
होते सभी
पर ध्यान रखो
आज की घड़ी
लायेगी
दिलायेगी याद
एक दिन की
इस दिन की/स्वत: आप
जब होगा ताप
फिर होगा
पश्चाताप
आलाप कर देगा
संताप

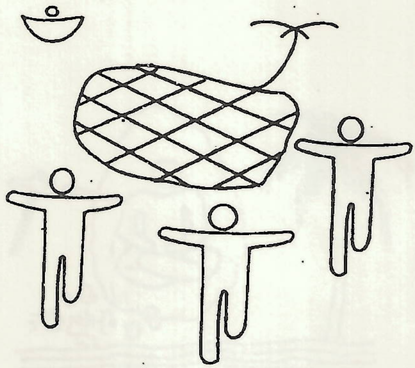

❖

असत्य से सत्य

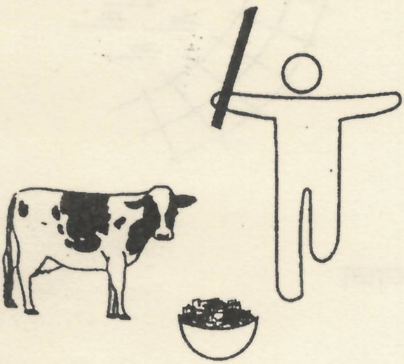

आपसी भेद ही
लाता है मतभेद
अभेद में भी
कर देता है छेद
महान खेद
न होता फिर स्नेह
अहर्निश
जो मैं कहता हूँ
सो ही सत्य
वह कहता है
सो असत्य
ये ऊहा पोह ही
आगम को कर देती है
अस्त, ध्वस्त, विध्वस्त
न न्याय का ज्ञान
न धर्म का काम
बस अपना नाम
न हो जाये बदनाम
विजय हो हमारी
पराजय तुम्हारी
इसी होड़ में
सत्य को असत्य
असत्य से सत्य
कर देता है साबित
झूठे देकर प्रमाण
कहो! कैसे हो कल्याण

कर देगा बदनाम

प्राणी
वाह वा में
बहा जा रहा है
बहता जा रहा है
आपदाओं की ओर
नहीं है जिसका छोर
क्वचित् किंचित्
कथित वाक्यों का
न कुछ ज्ञान/न ध्यान
आखिर में
क्या होगा इसका परिणाम
कोरी प्रशंसा
लायेगी निन्दा
व्यर्थ का नाम
खो देगा शान
हंसी के स्थान पर
रोने का काम
कर देगा बदनाम

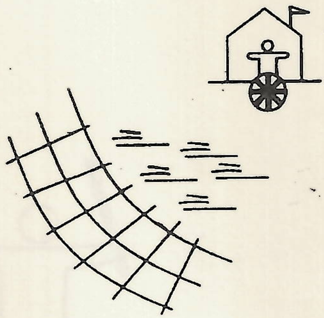

जीवन की कामना, लक्ष्मी को मानना नहीं

नहीं पहुंचा सकता
संसार सागर से
पार/उस पार
ये व्यापार
जीवन भर की कामना
लक्ष्मी को मानना ही
निज को सताना है
बताया है अनेक बार
ऋषियों ने महर्षियों ने
फिर भी विस्मय
नहीं सुना, समझा
उनका आसय
धिक्कार, हो
सतवार, उन्हें
चेतन! उनके वचन
ध्यान से सुन
इनका कहना
धर्म साधना
आराधना ही
दे सकता है
विपुल धन
तन, मन
वचन

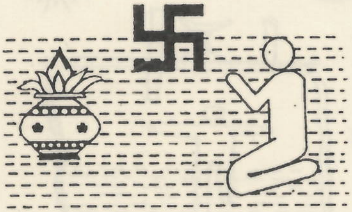

असाधारण/साधन

अपनी जिन्दगी में
सीमित अवधि में
क्या लिया
क्या दिया
क्या किया
कुछ तो विचार
जितना किया कर्म
उतना ही दु:ख का मर्म
और
जितना किया धर्म
कर देगा उत्सुख
आत्माभिमुख
फिर देगा उतना ही सुख
यही इसका फल
अहोरात्र की
क्रिया ही
बन जाती हैं
सुख दु:ख का कारण
साधन,असाधारण
एक घंटे का धर्म
एक घंटे का सुख देता है
दु:ख खोता है

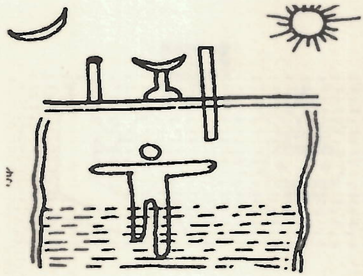

कर्म से अधिक धर्म

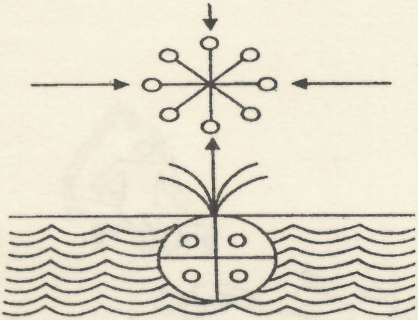

निश दिन
प्रति छिन
हर छिन
होता है मोल
धर्म कर्म का तोल
किस तरफ हे झोल
जीवन तराजू में
लोग कहते हैं
धर्म का कुछ अर्थ नहीं
सारा पुरुषार्थ व्यर्थ ही
पर ध्यान रखो
होगा कैसे / दिखेगा क्या
फल धर्म का
जितना कर्म होता है
उतना धर्म नहीं होता
फिर फल कैसे दिखे
जो हम धर्म करते हैं
वह कृत कर्म तक से
नहीं ध्वस्तता
अत: / धर्म सदा
कर्म से अधिक करो

कला पूर्ण रुचि

अपूर्ण
पूर्ण
सम्पूर्ण
प्रभापूर्ण
प्रकृति की
कला
शिल्प कला
नय/अभिनय
विनय से युक्त
विषय से मुक्त
सुकृत में ही
रची/पची
जिन भक्ति में
अभिरुचि
यही है
इन्द्र की शची
शची की रुची
जिन भक्ति में
अभिरुची
विरुचि
विषयों से
अरुचि

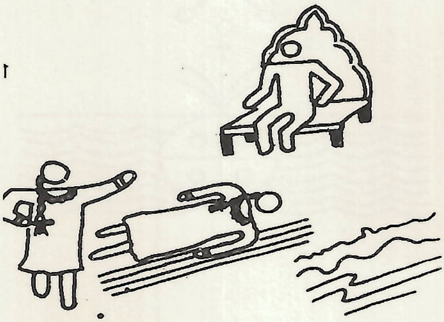

❖

परम धाम

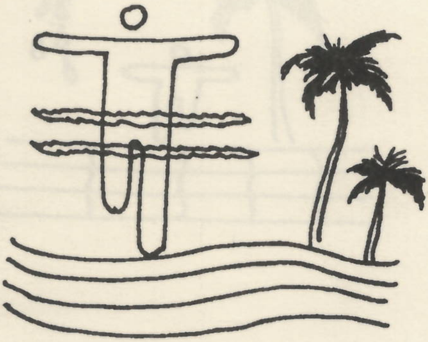

ये नित्य निरंजन
न हे अंजन
कर देत हैं रंजन
हर प्राणियों के
अपूर्ण / पूर्ण
सम्पूर्ण हृदय को
मनोरंजन
परम बाग
विशुध्द स्थान
निजस्थान
न फिर कुछ नाम
न मन का वच का
तन का
धन वा, योवन का
होता है पूर्ण विश्राम
आराम / सदा को
यदा यदा को
हे चेतन राम
कर ले कुछ ध्यान
हो जाये कल्याण

❖

प्यास की सास – आश

दोनों की बातएिं
बढ़ती जा रही थीं
एक ने कहा
मुझे प्यास है
दूसरे ने कहा
प्यास मेरे प्यास है
मैंने कहा
फिर किसके आस है
पास जिनके प्यास है
नाश उस के साथ है
अनोखी ये बात
लगती खराब
किन्तु/रहा नहीं गया
आ गया/गले तक
हार्दिक उद्‌गार
प्यास की भी सास है
नाम उसका आस है
करती विनाश
जीवन नाश/सत्यानाश
कर देती, आश है।

मेरा साम्राज्य न

आवाज से
चिड़ियों की
गूंज रहाथा
वन/उपवन
निद्रा भंग हुई
जाग्रित सिंह
कहता है "हैं"
किसकी "हैं" आवाज
कर दूंगा विनाश
मेरा साम्राज्य
आंखें लाल
मुंह विकराल
तनीं मूंछ
खड़ी पूंछ
हुई दहाड़
गूंजा पहाड़
सुनते ही चिड़ियां
उड़ गयीं दूर/अतिदूर
विचार/विस्मय पूर्ण
होता रहा/क्या हुआ आज
कैसा मैं वनराज
न कर सका चिड़ियों पर
साम्राज्य/धिक् मेरा काज
कोरा नाच
न है मेरा साम्राज्य

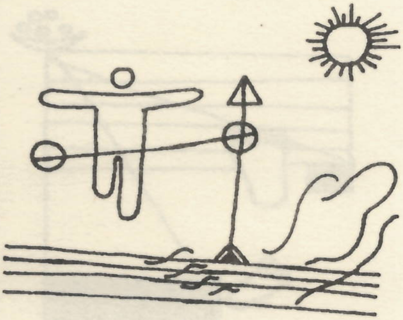

मोक्ष मार्ग

धर्म प्रभात
हार्दिक प्रकाश
लाऊँगा/बनाऊँगा
खोजूंगा सच्चा मार्ग
कैसा है?
कितना है?
वह सुख का मार्ग
पहुचूँगा सुख के मार्ग
न जाऊँगा उन्मार्ग
ये मेरा विचार
साधना का सार
जीवन सुधार
यह धर्म पुकार
हो रही है
हर क्षण/प्रतिक्षण
धर्म मार्ग
कितना स्पष्ट है
प्रत्यक्ष है
पावन मार्ग
मोक्ष मार्ग

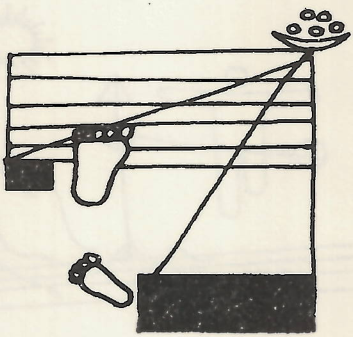

प्रगति नहीं अवनति

समय मान
गति मान
काल का चक्रन
चल रहा है
अनवरत
दुषमा से
दुषमादुषमा की ओर
किन्तु प्रणियों को
चितंनधारा
जीवन धारा
समय का अर्थ
दैनिक पुरूषार्थ
सुषमासुषमा के प्रयास में
बहत की गति
लगादी सर्व मति
फिर भी न हो सकी
प्रगति / सदगति
होती रही सदा
नित प्रति समय
अवनति

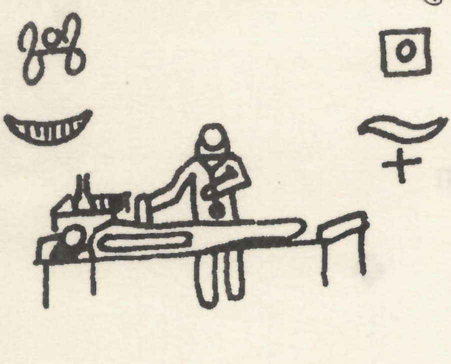

वास्तविक प्रक्रिया

धर्मात्मा का
कोई माप नहीं
न कोई छाप
न धाक्
कितना भी
दान करो
विधान करो
या उपवास
जब तक
न होगी लघुता
कैसे प्राप्त होगी/प्रभुता
धर्म बुद्धि/शुद्धि
विशुद्धि ही
दर्शा देती ही
शारीरिक क्रिया
वचन प्रक्रिया
वास्तविक प्रतिक्रिया

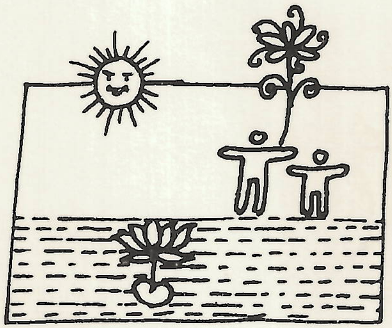

❖

चरित्र रथ

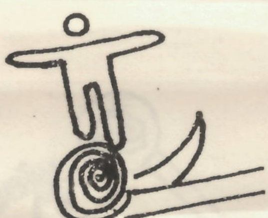

हम कहते
बहुत अच्छे
किन्तु/नहीं चलते
उस सच्चे
मार्ग पर !
पर, कहा किससे
जब स्वयं नहीं
उस मार्ग पर
तो कौन सुनेगा
बात तुम्हारी/पल भर
चाहे कितनी भी
सुन्दर, श्रेष्ठ, कर्णप्रिय
क्यों न हो बात मन भर
मात्र रहेगी कर्ण पर
प्रशंसा दायक
प्रसन्नता प्रदायक
न होगी कल्याण कारक
आत्मन् ! छोड़ो इसे
बढ़ो स्वयं
कल्याण परक
पथ पर
बढ़ जाओ शीघ्र
चरित्र रथ पर

उन्मार्ग/अधोमार्ग

......क्या?
मालूम नहीं?
लोग कहते क्यों?
आखिर में होगी भी तो
कुछ न कुछ गलती
बनती कभी
अज्ञान से, प्रमाद से, कारण विशेष से
फिर भी वह
हो जाएगी क्षम्य, किन्तु रहती अक्षम्य
वे गलतियां/सीमातीत
अतीत की ओर बढ़ती
जा रहीं/चली जा रहीं
सचेत, सावधान
करने पर भी
नहीं जाते चेत
होते अचेत
यही है एक
मार्ग/उन्मार्ग
अधोमार्ग/गमन का
कुगति पतन का

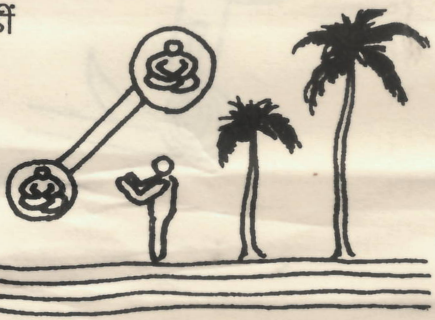

उपसर्ग विजेता संत प्रवर

आचार्य श्री विरागसागरजी महाराज द्वारा रचित साहित्य

सृजन आगम आलोक

१. शुद्धोपयोग

२. आगम चक्खू साहू

३. सम्यकदर्शन

४. सल्लेखना से समाधि

५. व्यसन विचार हिन्दी

६. जिनेन्द्र दर्शन पूजन

७. फूल नही ये काटें

८. जैनागम में यज्ञोपवीत

विधि विशेषतायें

९. तीर्थंकर दर्शन

प्रवचन साहित्य

१०. धर्म पीयूष

११. ऐसे चलो मिलेगी राह

१२. पहले पूजा फिर काम दूजा

१३. पर्युषण निधि (दस धर्म प्रवचन)

१४. दूर नहीं है मंजिल

१५. तीर्थकर वर्द्धमान

१६. सिर्फ दो प्रवचन

१७. आस्था आलोक

१८. उड़ रे पक्षी धीरे धीरे,

१९. तह की ओर

२०. साधना के आगे बढ़ते कदम

दैनिक उपयोगी साहित्य

२१. विमल नित्यं पाठावली

२२. बालविज्ञान भाग १

२३. बालविज्ञान भाग २

२४. बालविज्ञान भाग ३

२५. बालविज्ञान भाग ४

२६. कर्म विज्ञान भाग १

२७. कर्म विज्ञान भाग २

२८. कर्म विज्ञान भाग ३

२९. देव दर्शन विधि एवं महत्व

पद्य साहित्य

३०. भावों के विशुध्द क्षण

३१. मुक्ताजलिं १

३२. मुक्ताजलिं २

३३. नवदेवता निर्वाण क्षेत्र पूजा

३४. भक्तामंर पद्यानुवाद

अन्य साहित्य

३५. नैतिक कथा मंजूषा भाग १

३६. नैतिक कथा मंजूषा भाग २

३७. चैतन्य चिन्तन भाग १

३८. चैतन्य चिन्तन भाग २

३९. चैतन्य चिन्तन भाग ३

४०. सत्य मित्र सत्य दृष्टि (एकांकी)

४१. चारित्र शुद्धि

श्रद्धा सुमन..........

परम पूज्य, उपसर्ग विजेता, बालयोगी प्रज्ञा श्रमण, बुंदेलखंड के प्रथम दिगम्बराचार्य श्री विराग सागरजी महाराज लेखन की प्रत्येक विद्या में सिद्धहस्त है इन्होंने अपनी तूलिका धार्मिक साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में चलाई है एवं उन्होंने नये आयाम प्रदान किये है।

प्रस्तुत लघु पुस्तिका भावो के विशुद्ध क्षण उनके अध्यात्मिक कवित्व का परिचायक है उनका सदैव प्रयास रहा है कि जिस भी विद्या से संभव हो अज्ञ जनों को, संसारी जनों को पावन पुनीत आर्ष मार्ग जिन मार्ग जिन मार्गपर चलने को प्रेरित कर सकें जिससे कि उनका कल्याण हो सके गुरुदेव विरागसागर जी अपने गुरु वात्सल्य रत्नाकर, निमित्त ज्ञानी १०८ आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज की वात्सलता, सरलता की जीती जागती मिशाल है, हमारी भावना है कि गुरुदेव स्वकल्याण करते हुए हम जैसे अज्ञ जनों का परकल्याण करते रहें।

इस पुस्तक श्रमशर्ण में जिन्होंने ज्ञात-अज्ञात श्रमशर्ण सहयोग दिया है उन सबका मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

गुरुदेव के चरणों में कोटिश: नमन करते हुए त्रिवार नमोस्तु ....नमोस्तु...नमोस्तु.....

विवेक जवाहर गहाणकरी
कारंजा (लाड) जि. वाशिम
महाराष्ट्र.

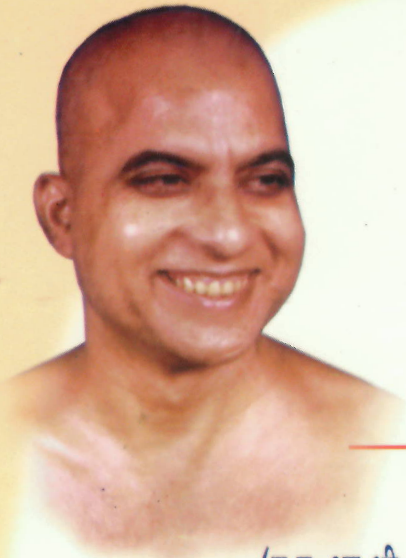

जीवन परिचय

(प.पु. आ.श्री. १०८ विराग सागर जी महाराज)

पुर्व नाम	अरविंद कुमार जैन
पिता	श्री कपुर चंद जी जैन
माता	श्रीमती श्यामा देवी जैन (क्षु.विशांत श्री माताश्री)
जन्म	२.५.१९६३ पथरीया,दमोह
शिक्षा	इंटर
क्षु.दीक्षा	२.२.१९८०
दीक्षा गुरु	प.पु.आ.श्री १०८ सन्मती सागर जी (मासोपवासी)
मुनि दीक्षा	९.१२.१९८३ औरंगाबाद(महा.)
दीक्षा तिथी	८.११.१९९२ सिध्दक्षेत्र,द्रोणगिरी, छतरपुर (म.प्र.)